भारत एवं राजस्थान सरकार द्वारा विज्ञापनों के लिए मान्यता प्राप्त

आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2023-2025

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जनसंवाद का पाक्षिक

वर्ष 9 | अंक 09 | उदयपुर बुधवार 15 मई 2024 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

विवाह पर 'कोहबर' के विविध चितराम

– डॉ. रामशब्दसिंह –

स्त्रियाँ तरह-तरह के शृंगार गीत तथा हंसी-मजाक से वर-वधू का मनोरंजन करती हैं। कभी कपड़े में छुपे लोढ़ा (बट्टा) को कुल देवता बताकर पूजा कराती हैं। कभी वधू की झूठी मिठाई वर को खिलाती हैं तो कभी पीपल के पत्ते में मटर का सूखा दाना रखकर पान बना कर खिलाती हैं। वर जब कभी ऐसा कर बैठता है तो सारी लड़कियाँ ठहाका लगाकर हंसने लगती हैं।

'कोहबर' शब्द संस्कृत के 'कोष्ठबर' शब्द से बना है। कोष्ठबर, विवाह के उस घर को कहते हैं जहाँ कुल देवता को स्थापित किया जाता है। इसे 'कौतुकागार' भी कहते हैं अर्थात मनोरंजन का वह स्थान जहाँ विवाह के उपरान्त वर-वधू को ले जाकर उनका तरह-तरह से मनोरंजन किया जाता है।

मन भावन विधि कीन्ह, मुदित भामिनी भई।
वर दुलहिनिहिं लेवाय सखी कोहबर गई।।

पूर्वी उत्तरप्रदेश तथा बिहार में शादी के समय कोहबर चित्रण की विशेष परम्परा है। यह साइत (लग्न) के अनुसार लड़की (वधू) तथा लड़के (वर) दोनों के यहाँ, घर के अन्दर दीवाल पर बनाया जाता है। घर के अन्दर जो कोहबर बनाया जाता है उसे 'मायर' (एक अज्ञात प्रतीकात्मका देवी) कहते हैं। उस चित्र (मायर) के ऊपर गाय के गोबर से सात छोटे-छोटे पिण्ड, सम्भवत: सप्त मातृका, चिपका कर उसे सिन्दुर से टीकते हैं। लड़की के माता-पिता अथवा जिन्हें अइघा जाता है, इस घर में मन्त्री की पूजा करते हैं। शादी में प्रयोग होने वाली प्राय: सभी वस्तुवों को इसी घर में रखा जाता है। इस घर में रात-दिन घी का दिया जलाया जाता है।

मंडप में शादी सम्पन्न हो जाने के बाद वर-वधू को कोहबर के घर में ले जाया जाता है। वर के अलावा वहाँ कोई पुरुष नहीं होता। गांव की स्त्रियाँ वर-वधू को कोहबर घर में ले जाते समय कोहबर गीत गाती हैं –

कांची पितरिया के इहै नवा कोहबर,
इहै नवा कोहबर, मामा के रचल दमाद,
तेई पइसी सूतैन दुलहे कवन राजा,
कोरवं बहुदारो देइरानि

स्त्रियाँ तरह-तरह के शृंगार गीत तथा हंसी-मजाक से वर-वधू का मनोरंजन करती हैं। कभी कपड़े में छुपे लोढ़ा (बट्टा) को कुल देवता बताकर पूजा कराती हैं। कभी वधू की झूठी मिठाई वर को खिलाती हैं तो कभी पीपल के पत्ते में मटर का सूखा दाना रखकर पान बना कर खिलाती हैं। वर जब कभी ऐसा कर बैठता है तो सारी लड़कियाँ ठहाका लगाकर हंसने लगती हैं। रामचरित्र मानस में भी कोहबर में ऐसी लौकिक रीतियों का वर्णन मिलता है –

कोहबरहिं आने कुअंर कुअंरि सुआसिन्ह सुख पाइकै।
अति प्रीति लौकिक रीति लागी करन मंगल गाई के।।

पूर्वी उत्तरप्रदेश के गांवों में शादी के समय द्वार पर सजावट के लिए भी कोहबर बनाया जाता है। घर के अन्दर जो कोहबर बनता है उसमें प्रमुख आकृति 'मायर' की होती है तथा शेष अल्पना बनाई जाती है और द्वार पर बनने वाले कोहबर में हाथी, आदमी, सूर्य, चन्द्रमा, चिड़िया, बिच्छू, सर्प, फूल-पत्ती आदि बनाई जाती है। कभी-कभी राम-राम, सीता-राम या कुछ गाली (हास्य-स्वरूप) लिख दी जाती है। एक लोक गीत में कोहबर चाँद सूरज बनाने का वर्णन है-

कोहबर लिखिवि चान रे सुरजवा,
मड़वा लिखवि गोपीचन्द रे,

एक दूसरे लोकगीत में लड़की (वधू) अपनी भाभी से कोहबर में चिड़िया तथा हंस बनाने को कह रही है –

कोहबर लिखन चलनी गउरा देई, हाथे कलमियाँ मसिहानि रे।
अस कई कोहब लिखिउ भउजिया, चारू चिरड्या जोड़ा हंस रे।।

कोहबर बनाने के लिए मिट्टी की लिपी-पुती दीवाल पर पीसे हुए चावल का घोल कपड़े से लगा देते हैं। एक लोकगीत में चावल के घोल (पीठरवा) पर कोहबर बनाने का वर्णन मिलता है-

पीसहु पीहरवा है सीता, लीखी लामी कोहबर।

चावल का घोल देने से आधार सफेद हो जाता है। उस सफेद आधार पर गेरू के घोल तथा बांस की कूंची से चित्रकारी करते हैं। चित्रण में पहले एक बड़ा चौकठ (बार्डर) बना लेते हैं तथा उसी के अन्दर हाथी तथा अन्य आकृतियाँ बनाते हैं। बार्डर को फूल-पत्तियों तथा तिकोने या चौकोर आकारों से अलंकृत करते हैं। कोहबर अलंकरण का यह कार्य गांव की नाउन, कहारिन या लड़की की भाभी करती है। एक लोकगीत में वर वधू की भाभी को ही दहेज में मांग रहा है-

गइया ना लेवो,
भइंसिया ना लेवो,
बरहो बरध धेनु गाय रे,
जेई तोहरे भाभी इहै कोहबर उरेहलीं,
उनही के हम लेब दहेज रे,

कोहबर में अनेक आकृतियों को प्रतीकात्मक रूप में बनाया जाता है। हाथी को गणेश तथा सुख-समृद्धि के प्रतीक रूप में बनाया जाता है। गोपीचन्द-पुतरी को वर-वधू के लिए, सूर्य-चन्द्रमा को दीर्घ उम्र के लिए, सूर्य-बिच्छू को काल से मुक्ति के लिए बनाया जाता है। इन लोक मान्यताओं के साथ घर का अलंकरण होता है क्योंकि अलंकृत घर शुभ माना जाता है।

कोहबर बनाते समय अनेक श्रृंगार गीत गाए जाते हैं। विवाह के बाद एक वर्ष तक कोहबर को नहीं मिटाया जाता। लोक चित्रण प्रथाओं में कोहबर पूर्वी उत्तरप्रदेश के गांवों की सबसे धनी चित्रण-प्रथा है।

सच कहने का जोखिम हर युग में उठाना होगा

-वेदव्यास -

हम भारत के लोग, सदियों से सत्ता और व्यवस्था की देशी-विदेशी लड़ाई लड़ते आ रहे हैं लेकिन 1947 की आजादी के बाद और संविधान का संरक्षण पाकर आज भी हमें लग रहा है कि लोकतंत्र को मजबूत और सुरक्षित बनाए रखने के लिए सत्य के प्रयोग निरंतर और निर्भीकता से जारी रहने चाहिए।

लोकतंत्र को मजबूत और सुरक्षित बनाए रखने के लिए सत्य के प्रयोग निरंतर और निर्भीकता से जारी रहने चाहिए। मनुष्य की सभ्यता और संस्कृति का पूरा संघर्ष इस एक सत्य पर आधारित है कि सच के लिए आवाज उठाते रहो, गरीबों और बेजुबान लोगों के लिए लिखते रहो और आप जहां भी हैं, जैसे भी हैं, सच के साथ खड़े रहो। पूरी दुनिया आज झूठ की आंधी में फंसी हुई है क्योंकि समाज और समय, लगातार राजा और प्रजा की मानसिकता में बंटा हुआ है।

मनुष्य की सभ्यता और संस्कृति का पूरा संघर्ष इस एक सत्य पर आधारित है कि सच के लिए आवाज उठाते रहो, गरीबों और बेजुबान लोगों के लिए लिखते रहो और आप जहां भी है, जैसे भी हैं, सच के साथ खड़े रहो। पूरी दुनिया आज झूठ की आंधी में फंसी हुई है क्योंकि समाज और समय, लगातार राजा और प्रजा की मानसिकता में बंटा हुआ है।

याद करिए कि हमारे त्रेता युग में भगवान राम और द्वापर युग में भगवान कृष्ण भी, रावण और कौरवों के अन्याय का प्रतिरोध करते हुए रामायण और महाभारत के नायक बने थे तो इस कलयुग में महात्मा गांधी भी सत्य और अहिंसा के प्रयोग करते हुए लोकतंत्र के महानायक बने।

जिस तरह अमेरिका ने सत्य की खोज करते हुए एक अब्राहम लिंकन को, सोवियत संघ ने एक मार्क्स एवं लेनिन को, वियतनाम ने एक होची मिन्ह को, चीन ने एक माओत्से तुंग को, दक्षिण अफ्रीका ने एक नेल्सन मंडेला को, क्यूबा ने एक फीडेल कास्त्रो को और बंगलादेश ने एक शेख मुजीबर रहमान को अपना मुक्तिदाता चुना था, वैसे ही मनुष्य को न्याय दिलाने की हमारी परम्परा भी प्रकृति के सच को स्थापित करने की हमारी जिद से जुड़ी हुई है। हर युग में साहित्य को भी इसीलिए मानव सभ्यता के सत्य का अन्वेशी माना गया है।

वर्तमान समय में सत्य की सर्वोच्च स्थापना का अभियान और दायित्व लेखक और पत्रकार सबसे अधिक निभा रहे हैं। 19वीं शताब्दी में आए वैज्ञानिक और औद्योगिक विकास से जिस प्रेस का जन्म हुआ वही आज 21वीं शताब्दी में व्यापक मीडिया बन गया और अब तो सोशल मीडिया का तकनीकी सूचना आंदोलन हो गया है। अपने समय की हर ताकत एक सच को साम, दाम दंड, भेद से दबाती आई है और हमारे सामंती के समाज में भी राजनीति धनपति, मीडिया और पुलिस प्रशासन का जन विरोधी गठबंधन ही आम नागरिक को सच बोलने-कहने और लिखने से अधिक रोक रहा है और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को अधिक कुचल रहा है।

मैं भी 1960 से साहित्य और पत्रकारिता से जुड़ा हुआ हूं और सच बोलने-लिखने का जुनून लेकर सत्ता व्यवस्था से पीड़ित और प्रताड़ित रहते हुए भी ऐसा अनुभव करता हूं कि 21वीं शताब्दी का वर्तमान मीडिया-पत्रकार अब कलम का सिपाही नहीं रह गया है अपितु कलम का मजदूर बन गया है। कुछ गिने-चुने लोग ही अब पत्रकारिता और मीडिया में बचे हैं जो अपना घर फूंक कर तमाशा देख रहे हैं। हम मशीन नहीं हैं केवल मशीने के पुर्जे हैं। सरकार और सेठ की पालकी उठाते-उठाते हमें अब समय और समाज के सच को उजागर करने से डर लगता है। लेकिन फिर भी हम कहेंगे कि शब्द की विश्वसनीयता सच में ही होती है।

आने वाला समय इस बात का गवाह बनेगा कि देश की गरीब जनता का सच ही राजा के झूठ और कपट से भरी मन की बातों को हराता है और स्वतंत्रता, संविधान और लोकतंत्र को बचाता है। जब एक ठीकरी घड़ा फोड़ सकती है और एक गांधी का सत्य का प्रयोग भी सात समंदर पार से आए साम्राज्यवाद को भारत से भगा सकता है तो फिर एक कलम का सिपाही बनकर हम सामाजिक, आर्थिक अन्याय के चक्रव्यूह से अपने लोकतंत्र को क्यों नहीं बचा सकते। हिम्मत से कोई एक कंकरी तो इस ठहरे हुए तालाब में फेंके? सरकार, बाजार, प्रचार और दुखों के महासागर में कोई पत्रकार कबीर दास बनकर ये तो कहे कि मैं केवल सच के साथ हूं।

अब आप शब्द रंजन समाचार पत्र इस लिंक पर भी पढ़ सकते हैं- https://thetimesofudaipur.com/shabd-ranjan/

पोथीखाना

बिणजारो : राजस्थानी का एकमात्र वार्षिकी

पिलानी से प्रकाशित राजस्थानी का एकमात्र सालाना 'बिणजारो' का यह 43वां अंक भी पिछले अंकों की तरह सम्पादक नागराज शर्मा (92) ने बड़ी मेहनत और कठोर साधनामय संकल्प के साथ प्रकाशित किया है। 'सम्पादकीय' में उनकी लिखी यह टीप हमारा ध्यान आकर्षित करती है- ''मेरी जानकारी में कितनी ही पत्रिकाएं निकलीं और बन्द हो गईं।

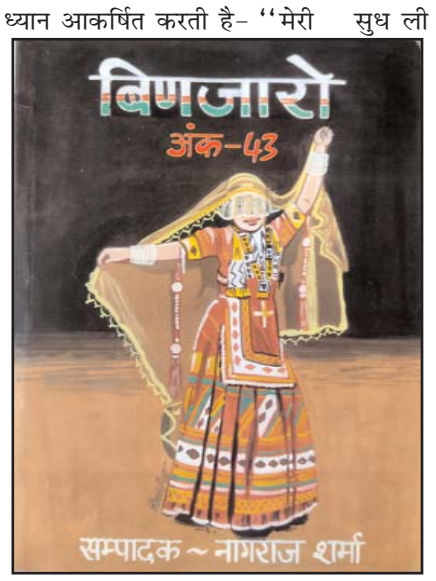

इसका कारण राजस्थानी के प्रति लोगों का जुड़ाव कम ही लगा। दस करोड़ लोगों की भाषा में अब तक हजारों पत्रिका और दैनिक अखबार निकलने चाहियें किन्तु जितनी पत्रिकाएं निकलीं वे उंगलियों पर गिनने लायक हैं। सरकारी मान्यता नहीं मिलने से यह भाषा रोजी-रोटी से नहीं जुड़ सकी।'' (पृ. 5)

श्याम जांगिड़ ने 'आओ बात करां' में 'अकादमियां रा बन्द दरवाजा खुल्या' में अपनी टीप में लिखा -''प्रदेश की आठों अकादमियों में अध्यक्ष बनाने से उनके बन्द दरवाजे खुल गये जिससे वे मृतक हुई जी उठीं। साहित्य अकादमी उदयपुर में दुलाराम सहारण और बीकानेर की राजस्थानी भाषा साहित्य संस्कृति अकादमी में शिवराज छंगाणी को अध्यक्ष बनाया। यह निर्णय गहलोतजी ने आने वाले चुनावों को देखकर किया अन्यथा नहीं करते। वैसे भी पिछले डेढ़-दो दशक से सरकार का यही रवैया रहा कि जब चुनाव सिर माथे आ पड़ते हैं तब साहित्य की सुध ली जाती है अन्यथा सरकार को जरूरत ही क्या? बिना साहित्य भी सरकार चल सकती है।''

वे आगे लिखते हैं- ''हिन्दी अकादमी के अध्यक्ष दुलाराम सहारण ने धड़ाधड़ आयोजन करने प्रारम्भ कर दिये और आर्थिक सहयोग भी बांट दिया। कोई राजी रहे या नाराज हो किन्तु राजस्थानी भाषा की हालत अ-ठीक है। बूढ़े अध्यक्ष छंगाणीजी से कोई काम नहीं होता। शायद वे शरीर और सोच से लाचार हैं। मंत्री महोदय बी. डी. कल्ला ने उन्हें फंसा दिया। पहली मिटिंग में ही खेला हो गया। जैसे बालक अपनी-अपनी पसंद के खिलौने लेते हैं वैसे ही अकादमी से जुड़े लेखक अपनी-अपनी पसंद के पुरस्कार ले चले। अध्यक्ष ताकते रह गये।'' (पृ. 9)

लेकिन नई सरकार आने पर सारी अकादमियों में गहलोत सरकार द्वारा हुई नियुक्तियां रद्द कर दीं। इससे सारी अकादमियों का काम काज ठप्प हो गया।

यहां जोधपुर घोषणापत्र में प्रकाशित चन्द बातों का उल्लेख जरूरी है। अप्रेल 2023 में यह घोषणापत्र तैयार किया गया जिसकी अध्यक्षता महाराज गजसिंहजी ने की। इसकी मुख्य बातें निम्न हैं-

(1) राज्य सरकार राजस्थानी को राजभाषा का दर्जा दे।

(2) राजस्थानी को आठवीं सूची में शामिल करें। नई शिक्षानीति लागू की जाय। प्राथमिक शिक्षा राजस्थानी में हो।

(3) राजस्थान सरकार हर भर्ती में छात्रों को 85 प्रतिशत आरक्षण दे।

(4) लोक सेवा आयोग की हर भर्ती में राजस्थानी का परचा हो। रीट में राजस्थानी जोड़ी जाय। सभी साहित्यिक विषयों में राजस्थानी संस्कृति के विषय जोड़े जांय।

(5) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में छठी से दसवीं तक राजस्थानी विषय जोड़ा जाय। शिक्षण-प्रशिक्षण महाविद्यालय में राजस्थानी जोड़ी जाय।

(6) प्रदेश के सभी विश्वविद्यालयों में राजस्थानी विभाग और प्रत्येक उपखण्ड में राजस्थानी महाविद्यालय खोले जायं।

(7) सरकारी पुस्तकालयों और वाचनालयों में राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों की 50 प्रतिशत खरीद की जाय।

(8) राजस्थान संगीत नाटक अकादमी और राजस्थानी भाषा एवं संस्कृति अकादमी द्वारा लेखकों और कलाकारों को विशेष प्रोत्साहन दिया जाय। (पृ. 10)

कुल 320 + 48 पृष्ठ विज्ञापनों के द्वारा इस अंक में राजस्थानी में सभी विषयों-निबन्ध, कहानी, कविता, लघुकथा, व्यंग्य, हास्य, अनूदित कहानियां, संस्मरण, गीत, गजल, डायरी, साक्षात्कार, एकांका आदि सभी कुछ दिये गये हैं। इससे लगता है कि राजस्थानी में लिखने वाले कई अच्छे लेखक हैं किन्तु उचित मंच और प्रोत्साहन के रहते राजस्थानी के लेखकों को पहचान नहीं मिल पा रही है। यह भी कि इसमें राजस्थान के सभी अंचलों के लेखक होने से राजस्थानी भाषा के विविध रूपों की शतरंगी छटा का भी आनन्द लिया जा सकता है।

- डॉ. तुक्तक भानावत

अब कहां है खनिशास्त्र!

- डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' -

भूमिगत निधि और धातुरत्नों की जानकारी जिस शास्त्र में थी, वह खनिशास्त्र अथवा खन्यशास्त्र के नाम से राजकीय खनिसाधकों और खानविभाग के अध्यक्षों के लिए अनिवार्यत: अध्ययन का विषय था।

हमें यह ज्ञात रहना चाहिये कि भारतीय राजधर्म की सफलता के लिए पठन-पाठन में इस शास्त्र का अभ्यास इसलिये जरूरी था कि शासक और राज्य कभी परमुखापेक्षी न हो। आत्म निर्भर शासक के लिए रुद्रदामन ने जिस कोश संचय की बात अपने जूनागढ़ अभिलेख में (14वीं पंक्ति में) की, वह मत चाणक्य के अर्थशास्त्र के मत से अलग नहीं है।

चाणक्य भी कोश के लिए निरंतर कोशिश पर जोर देता है और कामंदक उसका अनुसरण करता है। चाणक्य का कोई 'धातु कौटलीय' ग्रंथ इस विषय पर था, ऐसी मान्यता प्रो. उन्नी ने रखी है लेकिन अर्थशास्त्र के आकराध्यक्ष और कोश प्रवेश्य अध्यायों में स्वयं द्वारा ऐसे किसी शास्त्र को लिखने की जानकारी नहीं है। यह सच में तब राजा लोग यह जानते थे अथवा उनके लिए यह जानना जरूरी था कि कोई धातु या रत्न कहां से आता और कहां से निकलता है? इसी कारण कई बार चढ़ाइयां और व्यापारिक संधियां होती थीं। इसी जानकारी विदेश के व्यापारी भी रखते थे। सुलेमान का विवरण यही सिद्ध करता है। यह सब आजकल के कुशल व्यापारियों की तरह लगता जो ग्राहकों की मांग के अनुसार वस्तुएं उपलब्ध कराते हैं।

हालांकि मैंने चाणक्य के समय किसी खनिशास्त्र के प्रचलित होने की धारणा रखी है लेकिन इसकी पुष्टि 12वीं सदी के मानसोल्लास से होती है। बादामी का शासक भूलोकमल्ल सोमेश्वर दो बार इस शास्त्र का नाम लेता है : खनि शास्त्रेषु सर्वेषु लक्षणेन निरूप्यते।

भूलोकमल्ल सोमेश्वर ने इस शास्त्र के जिन उपयोगी विषयों का उल्लेख किया है, वे हैं :-

1. पृथ्वी पर मौजूद अलग-अलग खानों की जंतु विचरण आदि के आधार पर पहचान करना ।

2. खानों में मिलने वाले चांदी, सोना जैसे धातुओं का विवरण सत्यापित करना।

3. मुक्ता, हीरा, वैडूर्य जैसे विविध रत्नों के क्षेत्र का वर्णन और उनके रूप भेद बताना।

इनके अतिरिक्त इस शास्त्र में निधि (दफीनों) की पहचान करने और उनको पाने के लिए उपाय भी लिखे गए थे। इनमें निधि पाने की सात युक्तियां तो सोमेश्वर ने यह कहकर लिखी हैं कि रूढ़ियां लौकिकी निधि की जानकारी जरूरी है- तत्रापि लक्ष्यते तज्ज्ञै: निधि: विध्युक्तमार्गत:।

कितना अच्छा होता कि ऐसा कमाऊ खनिशास्त्र हमारे हाथ लग जाता! हालांकि ऐसे एक शास्त्र (नामा हा ए हिकमात) के होने का जिक्र अबुल फजल 'आइन ए अकबरी' में करता है लेकिन उसमें धातुओं का कोटिकरण ही रहा होगा क्योंकि उसे वह ज्ञान की पोथी कहता है। हां, ठक्कर फेरू ने अपनी संतानों के लिए 'द्रव्य परीक्षा' में केवल धातुओं आदि के परीक्षण ही बताए हैं, प्राप्ति के उपाय नहीं लिखे। अच्छा हुआ जो कुछ पुराणों ने अपनी कथाएं कम कर रत्नशास्त्र बचा लिया। (मेरी : वास्तु एवं शिला चयन)

हां, हम केवल नश्वर वस्तुओं का मोह त्यागने, दान करने और संसार की असारता के कथा-व्याख्यान में ही रुचि लेते रहे और ऐसी ज्ञान की पुस्तकें हमारे बीच से कहां चली गई? न हमें याद है और न ही शायद जरूरत समझी गई। मगर, अब भी सबसे ज्यादा जरूरत इसी की है और उनको भी है, जो यह सब माया प्रपंच त्याग की बात मंच पर बढ़-चढ़कर करते हैं।

बाड़मेर की नक्काशी

-पी. आर. त्रिवेदी-

रेगिस्तानी इलाके में मीलों तक फैले रेतीले मैदानों में रहने वालों का जीवन बड़ा ही दूभर रहता है। न वृक्ष, न वनस्पतियां और न पीने का पानी; अभाव-ही-अभाव मिलेगा परन्तु वहां भी लोग न हार मानेंगे, न निराश होंगे बल्कि जीवन को कैसे अधिकाधिक सुन्दर तथा रसमय बनाकर जिया जाय, यह सीखने को मिलेगा।

यह आश्चर्य ही है कि ऐसे अभावग्रस्त इलाके में ही संगीत के जितने गायक, वाद्यों के वादक और कलाकारों के करिश्में देखने को मिलेंगे, अन्यत्र नहीं मिलेंगे। ऊंटों के जो करतब यहां मिलेंगे, दांतों तले अंगुली दबाते रह जायेंगे। यहीं नड़ वादक करणा हुआ। खड़ताल वादक सिद्दीक और गायक नूर मोहम्मद ने अपनी सांगीतिक कलाओं से झूंपे से बाहर कदम रखकर विश्व भ्रमण किया। उनकी विरासत ने जो द्वार खोले, आज अनेक कलाकार अनमोल खजाने की तरह दीप्त हो रहे हैं। मटकी जैसा वाद्य यहीं जीवन रस का संगीत बना हुआ है।

काष्ठकला की दृष्टि से भी अनेक कलाकार उत्कृष्ट नक्काशी काम के लिए पहचान बनाये हैं। एक नाम बाड़मेर जिले के ऊण्डखा गांव के प्रहलादराम का लिया जाता है जो काष्ठकला पर अपनी उत्कृष्ट कला का सुचर्चित सुनाम लिये है। इनके समाज में वर्षों से चला आ रहा मिथक आज भी सुनने को मिलता है। उसके अनुसार अपनी कला अपनी सुथार जाति के ही लोगों की धरोहर बनी रहे। अन्यों को सिखाना वर्जित रहेगा तो ही हम ठीक से अपना भरण-पोषण कर पायेंगे और हमारा नाम चलता रहेगा।

प्रहलादराम ने अन्यों को यह कौशल सिखाया। उसका सिद्धान्त था, ज्ञान फैलाने से बढ़ता है। उसे कैद करने से वह कुन्द पड़ जाता है और फलीभूत भी नहीं हो पाता है। पूरी प्रकृति नदी, पहाड़, वृक्ष, जंगल सबके सब अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए जी रहे हैं तो मनुष्य को भी संकीर्ण होने की बजाय उदार होना चाहिए।

यह सोच प्रहलादराम ने लकड़ी के छोटे-से-छोटे तथा बड़े-से-बड़े शिल्प पर अपनी नक्काशी कला से उसे जो खूबसूरती देना शुरू किया कि पूरे चौखले में उसे कद्र मिलते-मिलते उसका क्षेत्र विस्तार हुआ। शुरू में उसने अपने यहां उपलब्ध रोहीड़ा की लकड़ी पर काम प्रारम्भ किया पर जब इसकी उपलब्धता नहीं रही तो सागवान की लकड़ी काम में लेनी शुरू की। यह लकड़ी इन्दौर, आसाम, भावनगर से मंगवानी प्रारम्भ की।

पहले से चली आ रही परम्परा में उसने बहुत सारी अपनी खूबी का कौशल दिखाते पाट, बिजानी, सुरमादानी, हुक्का, विविध लोकवाद्य, चारपाई, चरखा (अरठ), सन्दूक, खिलौने, दरवाजे की चौखट, घट्टी, चौखटों के घोड़े, मकान की छत (सियाल), बैलगाड़ी, पिलान आदि के साथ नई चलन के सोफे, टेबल, कुर्सी, टीवी, रैक, बक्से, फोटोफ्रेम, ड्रेसिंग टेबल, डाइनिंग सेट, पलंग, पालने लेकर उसको भी नक्काशीदार बनाकर बहु उपयोगी बनाया।

प्रहलादराम इसके लिए सोरसी, गिणीयार, पेचकस, पकड़, अरगत, होण, पथरी, खरोती, बरमी, कवोण, रन्दो, हथोड़ी, गोल नरुया, सफाई नरुया, उप्पा, नखलो, आजोली, सोनस, भीड़ो, कम्प्रेशर जैसे यन्त्रों-औजारों की सहायता से मनचाही चीजों को मनभावन बनाते हैं। रेगिस्तान जैसे इलाकों में ही नहीं, अन्यत्र प्रचलित शिल्प और उद्योग को उचित संरक्षण और कारीगरों को रोजगार के साधन उपलब्ध कराने में सरकार का महत्त्वपूर्ण योग अनिवार्य है। प्रहलादराम का भी यही कहना है कि नक्काशी जैसे उद्योग को पनपाने के लिए बिचौलियों से मुक्ति दिलानी होगी। अच्छे बाजार बनाने होंगे। समय-समय पर निर्माणकर्त्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी होगी। नई-नई डिजाइनों की जानकारी से उन्हें अवगत कराना होगा। सस्ती दर से लकड़ी उपलब्ध करानी होगी। सस्ती दर पर ऋण उपलब्ध कराना होगा तब जाकर अधिकाधिक लोग खरीददार के रूप में आगे आयेंगे और अनेक लोगों को रोजगार उपलब्ध हो सकेगा।

स्मृतियों के शिखर (184) : डॉ. महेन्द्र भानावत

सांप-सीढ़ी का खेल : अच्छे-बुरे कर्मों का मेल

सांप और सीढ़ी खेल स्वयं में ही पूरा प्रतीकात्मक खेल है जो मानव जीवन के कई रूपों को दर्शाता है। हमारे बड़ेरों ने इस खेल के माध्यम से न केवल मनबहलाव याकि मनोरंजन प्रदान किया अपितु जीवन शुद्धि के पक्षों को उद्घाटित कर नैतिक जीवन जीने की संकल्पना भी दी।

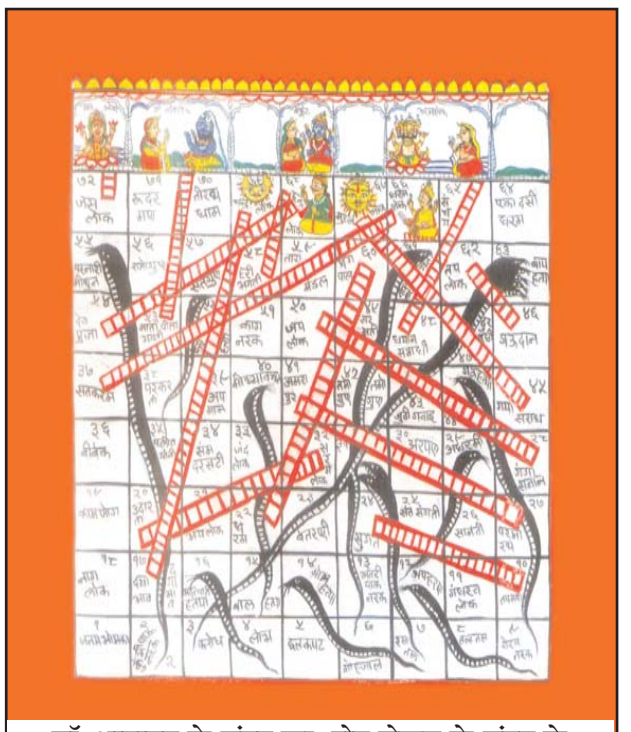

डॉ. भानावत के संग्रह का, शेष जेकब के संग्रह के

इस दृष्टि से सांप-सीढ़ी खेल में सांप पतन तथा सीढ़ी उत्थान का द्योतक है। युगल रूप में ये दोनों गुण-अवगुण, अच्छा-बुरा, सगुण-निगुण, आश-निराश, खरा-खोटा, सत-असत, प्रकाश-अंधकार, धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, स्वर्ग-नर्क आदि के अनुकरणीय उद्घोषक हैं।

मुझे कतई यह कल्पना नहीं थी कि कभी धर्मयुग में लिखे मेरे सांप-सीढ़ी के खेल शीर्षक आलेख को पढक़र कोई उसे अपनी पीएच.डी. का विषय बनायेगा और वह भी विदेशी। कईबार ऐसा होता है जब कोई मामूली समझे जाते विषय पर लिखा लेख किसी अच्छे प्रतिष्ठित पत्र की शोभा बन जाता है।

18 जुलाई 1965 का धर्मयुग का वह अंक तो अब सहज कहीं उपलब्ध नहीं है पर मेरे लेख की जानकारी विदेशी विद्वानों को है, यह जान मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। किसी का कोई लेखन किस प्रकार, कहां-कहां, कैसे-कैसे अपना महत्व प्रतिपादित करता है, लेखक तथा प्रकाशक भी इससे अनजान रहता है।

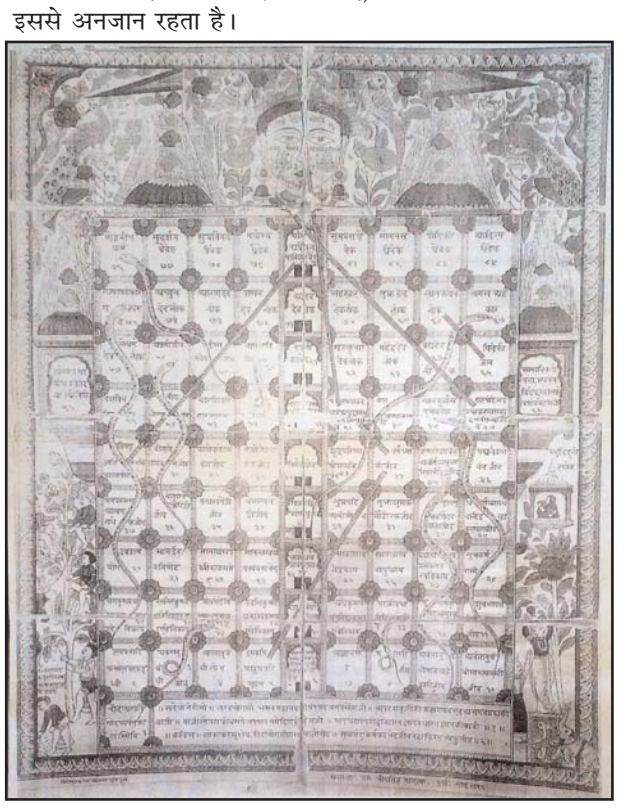

मुझे भी मालूम नहीं पड़ता यदि मेरे पास डेनमार्क से जेकब स्मीट मडसेन नहीं आते। जेकब 5 दिसंबर 2013 को मिलने आए और मुझे यह जानकर बेहद खुशी हुई कि वे कोपनहेगन विश्वविद्यालय से लोकप्रिय खेल सांप-सीढ़ी पर पीएच.डी. के लिए शोधकार्य कर रहे हैं। मेरे से भेंटकर उन्होंने मुख्यत: दो उपलब्धियां प्राप्त कीं। एक तो उन्होंने धर्मयुग का वह अंक देख लिया जिसमें मेरा सचित्र लेख छपा था। दूसरा प्रसंग इससे भी महत्वपूर्ण उन्होंने मेरे से भेंट करने का माना जिसकी उम्मीद उन्हें कम थी।

जेकब ने बताया कि भारत के विभिन्न प्रांतों मुख्यत: राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र में भ्रमण कर उन्होंने सांप-सीढ़ी खेल के श्वेत-श्याम तथा रंगीन पाठे प्राप्त किए हैं जो 50 से अधिक हैं। सभी में अलग-अलग खंड-खाने बने हैं। संख्यावाचक इन खानों-खंडों में गोटी में आई संख्या के अनुसार अपनी पहचान की कंकरी (चिन्ह) उन खंडों को स्पर्श करती है। जिस खंड में सर्प-मुंह होता है उसमें आते ही खिलाड़ी की कंकरी उस सर्प के सहारे ठेठ अंत तक के खाने में पहुंचानी पड़ती है जहां उसकी पूंछ समाप्त होती है। यह उस कंकरी की पतनावस्था कहलाती है और ठीक इसके विपरीत सीढ़ी का सिरा जिस खंड से प्रारंभ होता है उसके सहारे उस सीढ़ी के ऊपरी सिरे वाले खंड तक कंकरी का चढ़ाव होता है जो उसकी उत्कर्षावस्था होती है।

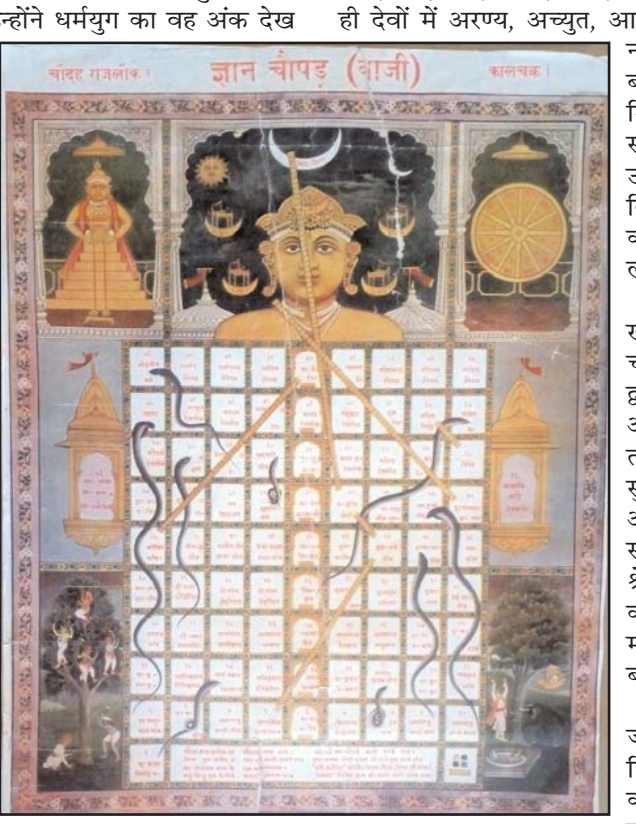

सांप-सीढ़ी का खेल कहीं ज्ञान चौपड़, कहीं ज्ञानबाजी तो कहीं मोक्षपट के नाम से भी जाना जाता है। जेकब को प्राप्त राजस्थानी, हिन्दी, गुजराती और संस्कृत के खेल-पाठे मैंने देखे। उसमें एक अरबी लिपि का भी था। इससे इस खेल की व्यापक लोकप्रियता का दिग्दर्शन होता है। मुख्यत: इसका लक्ष्य धर्म-अध्यात्मपरक कर्म-फल का दरसाव ही है। अच्छे कर्म करने से अच्छा फल और बुरे कर्म करने का नतीजा बुरा होता है। ये पाठे सौ खंड तक के होते हैं।

मेरा चित्र-फलक कपड़े पर चित्रित है। ऐसे कपड़े पर चित्रित फलक पट्ट कहलाते हैं। राजस्थान में यह पट्ट कला पड़ कला के नाम से जानी जाती है जिसमें सर्वाधिक प्रसिद्धि पाबूजी की पड़ को मिली। अब तो ये पड़ें विदेशी संग्रहालयों तक की शोभा बनी हुई हैं। सबसे पहले इन पर लिखने

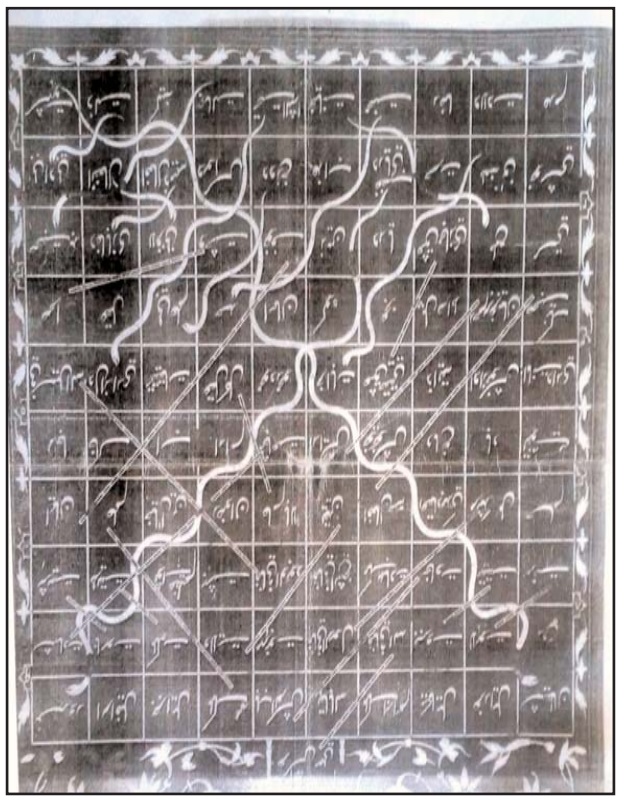

का सौभाग्य मुझे ही मिला और मैंने ही विदेशी स्कॉलर जो मिलर तथा स्मिथ को राजस्थान की यात्राएं करा पड़ कला का अध्ययन कराया।

सांप-सीढ़ी के मेरे चित्रपट में 72 खाने हैं और ऊपर ही ऊपर गऊलोक, शिवलोक, बैकुंठलोक भरमलोक के सचित्र खाने हैं। अन्य लोकों के खाने जस, इन्द्र, सूरज, धर्म,तप, जप, चन्द्र, भय, नाग, गंधर्व, स्वर्ग, नर्क गऊ, तथा राजलोक हैं। ऐसे ही देवों में अरण्य, अच्युत, आनल, सहस्त्रा, शुक्र, सनत, प्राण नामक देवों के खाने हैं। इनमें बहुत कम के संबंध में जानकारी मिलती है। जेकब ने बताया कि सबसे प्राचीन सन् 1735 का पाठा उन्हें जयपुर से उपलब्ध हुआ किंतु मेरे पास संगृहीत पट उन्हें कई दृष्टियों से अधिक महत्त्वपूर्ण लगा।

जेकब के पाठों में सर्पजनित खानों की अधिकता से पता चलता है कि मृत्युलोक में जीवों द्वारा पुण्य की बजाय पापकर्म अधिक किया जाता है। तप, जप तथा सेवा सौहार्द कल्याणजनित सुकृत्यों की न्यूनता से धरती अधिक बोझिल बनी हुई है यद्यपि साधु, संन्यासी, तपस्वी तथा श्रेष्ठीजन सदैव अच्छे कर्म करने का उपदेश देते हैं पर स्वार्थलोलुप मनुज पर उनके उपदेशों का असर बहुत कम होता है।

एक पाठे में चौरासी लाख जीव योनियों को दर्शाया गया है। चित्रों के माध्यम से भी मनुष्य के करणीय-अकरणीय कार्यों के फल-परिणाम, जैसा करोगे वैसा भरोगे सूत्र के माध्यम से दर्शाया गया है। इसके लिए जेकब ने जैन दर्शन के विभिन्न आचार्यों, विद्वानों तथा धर्माचार्यों से भी चर्चा की। उन्होंने बताया कि ये खेलजनित चित्रफलक मानवजीवन को पारदर्शी बनाने के संकल्पित साधन रहे हैं।

अरबी पाठे में 100 खण्ड हैं। उसमें सांपों की भयावहता है

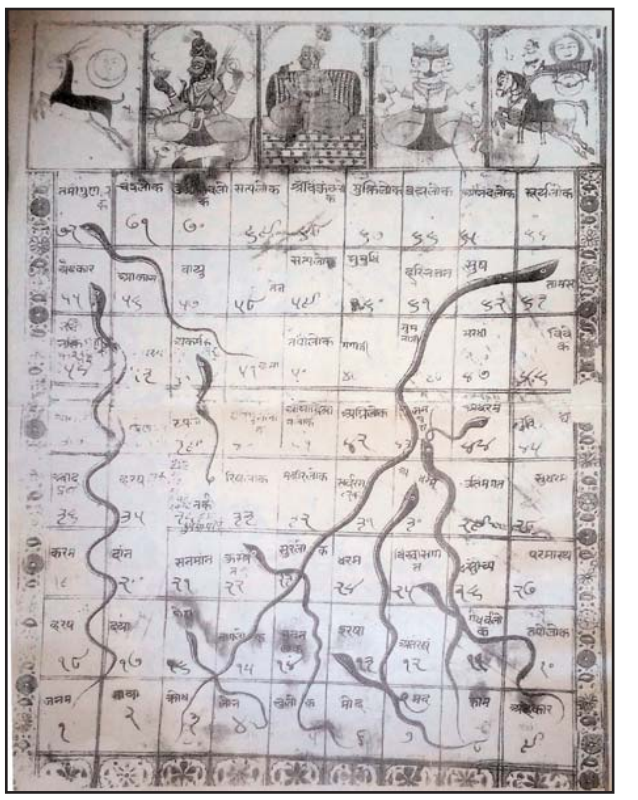

किन्तु सीढियों के फलक भी हैं जो सावधानीपूर्वक सात्विक जीवन जीने की राह प्रशस्त करते हैं। कुछ पाठों में तो सीढियों की बजाय खानों में ही शिक्षात्मक सन्देश मिलते हैं।

जीवन के अच्छे-बुरे अनेक भाव संवेग हैं। काम, क्रोध, अहंकार, मद, मोह, माया, नशा, ईर्ष्या, द्वेष, राग, झूठ, विश्वासघात, अविवेक, कुसंगत, अकर्म, तमोगुण जैसी स्थितियां मनुष्य को पतितावस्था की ओर धकेलती हैं। इससे कई प्रकार के दुःख, कष्ट, विसंगतियां, विपदाएं, विषाद आक्रामक बन मानव को पथ भ्रष्ट करते हैं जबकि अपनी सद्बुद्धि, सुसंगत, सुविचार तथा शुद्ध करणीय कर्म से वह गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी अच्छा एवं श्रेष्ठ मानव बन सकता है।

जेकब ने बताया कि भारत भूमि सचमुच में महान है। यहां रहकर व्यक्ति पुण्यार्जन करते कर्मफल के अनुसार उच्चस्थ लोक में पहुंचकर अपना आत्मोद्धार कर सकता है।

संक्षेप में इन खानों तथा इनसे संबंधित धारणाओं और लोकव्यापी अवधारणाओं पर यदि अध्ययन किया जाय तो बहुत सी बातें जानने को मिल सकती हैं जो अब तक अज्ञात रही हैं। पुस्तकों तथा शास्त्रों में जो मान्यताएं हैं वे लोकमान्यताओं से जुड़ी हैं। यह भी कि लोक में जो चीजें प्रचलित हैं उनका अध्ययन प्रथमत: तो लोक घटित ज्ञान संपदा के आधार पर ही होना चाहिए ताकि व्यावहारिक संकल्पनाओं से अधिकाधिक परिचित हुआ जा सके।

शब्द रंजन

उदयपुर, बुधवार 15 मई 2024

सम्पादकीय

सांपों के मेले में विविध रंगी सर्प दर्शन

मनुष्यों के मेले तो आपने बहुत देखे सुने होंगे मगर सांपों का मेला कभी देखने में नहीं आया होगा। हमारे यहां सर्प-पूजा एक धार्मिक कर्त्तव्य समझा जाता है। नागपंचमी जैसा पूरा त्यौहार ही सर्प-पूजा के रूप में मनाया जाता है। तेजाजी यदि सर्पराज से अपनी जीभ डसवाने का वचन नहीं निभाते तो आज उनकी लोकदेवता के रूप में इतनी धाम नहीं चलती। ताखाजी की सर्पाकार मूर्ति राजस्थान तथा गुजरात के कई देवरों में प्रतिष्ठित की हुई मिलेगी।

उदयपुर के पास भमरास्या में बावजी भमरास्या की सर्पाकार प्रतिमा है जहां कुत्ते काटे हुओं का शर्तिया इलाज होता है। नाग-पूजा से सम्बन्धित ऐसे एक नहीं सैकड़ों स्थान मिलेंगे जहां जाकर लोकमानस को अपनी शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा से मुक्ति मिलती है।

बड़े देवता के रूप में गोगाजी की विशेष मान्यता है। श्रीगंगानगर जिले की नौहर तहसील में गोगामेड़ी नामक स्थान इसके लिए न केवल राजस्थान में अपितु बाहरी इलाकों में भी बड़ा प्रसिद्ध है। यही गोगाजी का पुण्यस्थल है। अगस्त के पूरे महीने यहां मेला लगता है जिसमें दूर-दूर तक के लाखों व्यक्ति दर्शनार्थ पहुँचते हैं। भक्त लोग बड़े-बड़े जुलूस के रूप में प्राय: पैदल अपने हाथों में अपने-अपने समूह विशेष के प्रतीक बड़े-बड़े निसांण (ध्वज) लेकर पहुँचते हैं। कइयों के हाथों में काले, पीले, सफेद, चितकबरे, नीले नानारंगे सांप लिपटे रहते हैं। इन्हें देखकर दर्शकों की हवा खिसकती देखी जाती है मगर सांपधारियों को तनिक भी कोई चिंता नहीं रहती। यही नहीं, जुलूस में अनगिनत व्यक्ति ऐसे भी देखने को मिल जायेंगे जो लोहे की भारी भरकम सांकलें अपनी पीठ पर ठोकते हुए गोगादेव की शरण में पहुँचते हैं।

ढोल, डमरू तथा झांझ के सम्मोहक स्वर में बढ़ते हुए पुरुष अपनी नृत्य अदायगियों में खुशी के मारे उछाल भरते हैं और महिलाए गोगा गीतों के गजब के बोलों में अपने रंगीन वस्त्राभूषणों की छटा बिखेरती हुई अपने आस्था-चरण पखारती हैं। जात-पांत तथा धर्म संप्रदायों से गोगाजी का कोई वास्ता नहीं। उनके यहां हिन्दू- मुसलमान सभी समान भाव से पहुँचते हैं। यों गोगाजी राजपूत हिन्दू थे मगर मृत्यु के बाद वे जलाये नहीं गये अपितु समाधिस्थ हुए।

नागों रे रत्न प्राप्त करने वाले जागा :

राजस्थान में नागों के रत्नों को प्राप्त करने वाली एक जाति है जो जागा नाम से प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि नागपंचमी के दिन जागा लोग किसी निश्चित खुले स्थान में एकत्र हो जागरण करते हैं। जाति का मुखिया बीच में बैठकर जागरण सम्बन्धी मंत्रों का उच्चारण करता है। उसके आसपास नागों के पीने के लिए मिश्री मिश्रित दूध के सैकड़ों कटोरे रख दिये जाते हैं। रात्रि को ठीक बारह बजे विभिन्न रास्तों से नाग आने लगते हैं और अलग-अलग कटोरों के पास फन फैलाकर खड़े रह जाते हैं। इतने में नागराज की सवारी आ पहुँचती है। ये एक सर्प पर आरूढ़ होकर आते हैं। उनकी सवारी सभी पात्रों के बीच रखे एक बड़े पात्र के वहां आकर रुक जाती है। नागराज सर्प से उतर कर सभी साँपों का अभिवादन स्वीकारते हैं तदनन्तर अपने पात्र का दूध पीना प्रारम्भ कर देते हैं। इनके दूध पी लेने के बाद दूसरे नाग अपना दूध पीना प्रारंभ करते हैं और फिर नागराजा सहित सभी अपने-अपने कटोरों में एक-एक रत्न उगलते हैं। तदनन्तर नागराज के साथ सभी सर्प अपने गंतव्य को लौट पड़ते हैं। नागों द्वारा उगले गये रत्न जाति का मुखिया एकत्र करता है जिसे सभी आपस में बांट लेते हैं।

पत्र-पिटारी

'शब्द रंजन' के बहाने डॉ. भानावत को लिखते डॉ. दिलीप धींग

अनेक व्यस्तताओं के चलते आपसे बात किये लंबा समय हो गया। क्षमा चाहता हूँ। हर पखवाड़े 'शब्द रंजन' के जरिये आपकी रचनात्मक कुशलता से अनुप्रेरित होता हूँ। 'शब्द रंजन' मिलते ही इसका पूरा अवलोकन कर लेता हूँ, फिर इसे आराम से पढ़ता हूँ। 'स्मृतियों के शिखर' पर आरोहण करना आनंददायक और ज्ञानवर्धक है। 1 मार्च 2024 के अंक में आपने गांधीजी पर 'हम तो चरखा से लेवैं सुराज हमार कोई का करिहे' स्मृतियों शिखर (180) लिखा, जो अपने आप में अनूठा है। बापू पर ही 15 फरवरी 2024 के अंक में आचार्य महाप्रज्ञ के लेख 'असंग्रही गांधी अहिंसा के मनोबल से महात्मा हो गए' में जैन धर्म और महात्मा गांधी विषय पर चिंतनपरक व शोधपूर्ण सामग्री पढ़ने को मिली। दुनिया में किसी भारतीय का इतना सम्मान नहीं, जितना गांधीजी का। यह भारत एवं हर भारतीय के लिए गौरव की बात है।

आप मेवाड़ और मेवाड़ी के भूले-बिसरे शब्दों का बड़े अर्थपूर्ण और भावपूर्ण प्रयोग करते हैं। उन शब्दों को पढ़कर गाँव, बचपन और बाईजी-बाउसा सबकी याद आ जाती है। विलुप्त होते शब्दों और परम्पराओं को बचाने में आपका योगदान अभिनंदनीय है।

और हाँ, 15 मार्च के अंक में 'होली के हितोपदेश' में हर बार की तरह इस बार भी मुझे सम्मिलित किया। आपका स्नेहाशीष सदा बना रहे। 'शब्द रंजन' की संपादक एवं बंधुवर डॉ. तुक्तकजी सहित परिवार में सबको सादर जय जिनेन्द्र!

स्नेहाधीन
डॉ. दिलीप धींग

वनवासी अंचल का गीड़ा खेल

-डॉ. दीपक आचार्य-

राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात का सरहदी इलाका वनवासी बाहुल्य बागड़ अंचल जहां संस्कृतियों, पुरातत्वों, इतिहासों और परम्पराओं की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा है, वहीं पुराने खेलों की श्रृंखला यहां विद्यमान रही है जो खेलकूद के लिहाज से इस अंचल को विशिष्टता प्रदान करती है। यहां के अधिकतर खेल मौसम और विविध पर्वों के साथ जुड़े हुए हैं। इनमें से एक रोचकता भरा खेल है गीड़ा। यह परम्परा से चला आ रहा है। इस खेल की समूची प्रक्रिया को देखकर यह कहें कि आज की 'हॉकी' इसका आधुनिक एवं परिष्कृत स्वरूप है तो बहुत कुछ सम्भव लगता है।

'गीड़ा' खेल खासकर सीमावर्ती क्षेत्र का लोकप्रिय खेल है जो गांव-ढाणियों तक में फैला हुआ है। इसे वनवासी बालक-बालिकाओं, तरूण-तरूणियों आदि द्वारा परस्पर समूह बनाकर उसी तर्ज पर खेला जाता है जिस तरह हॉकी। इसमें गेंद का काम करती है कपड़ों की चिन्दियों को सघनता से भर कर दबाई एवं सी हुई गठरी जिसे 'डोटी' कहा जाता है। इस गेंद को गोलमटोल आकार-प्रकार प्रदान कर अच्छी तरह धागे से सी लिया जाता है अथवा रस्सी बटेरी जाती है।

प्राचीनकाल का 'गीड़ा' आज की हॉकी स्टिक के आकार की स्थानीय स्तर पर वनों से प्राप्त लकड़ी होती है। प्राय: खजूर वृक्ष की रेशेदार चिकनी एवं स्टिकनुमा लकड़ी गीड़ा के रूप में प्रयुक्त की जाती है।

यह गीड़ा हन्देड़ा, खाखरा आदि का भी हो सकता है जिसे स्टिक का आकार दे दिया जाता है। गांवों में सब जगह कहां मैदान? लेकिन वनवासियों के लिए तो उनके गांव ही उनके मैदान हैं जहां रह कर वे जीवन का खेल फक्कड़ शैली में खेलते हैं।

गांव के भीतर या बाहर के मैदाननुमा समतल भाग या गोचर भूमि को ही गीड़ा का मैदान बना लिया जाता है। यहां वनवासी अपनी अनूठी मस्ती के साथ गीड़ा खेलते हैं। यों यह परम्परा से ग्वालों-चरवाहों का खेल रहा होगा, मगर अब यह ग्राम्य संस्कृति का अंग बन चुका है। मैदान में गोल नेट एरिया की तरह इसमें किसी विशिष्ट स्थान का अंकन नहीं होता, मगर दोनों तरफ के छोरों पर पेड़, पत्थर आदि की सीमा का प्रतीक मान लिया जाता है। आज की हॉकी के गोल को इस खेल में 'बोड़ो' कहते हैं।

खेल आरम्भ होने से पहले मैदान में दोनों ही ओर बारह-बारह या इससे अधिक खिलाड़ी जमा हो जाते हैं। दोनों ही तरफ के कप्तान की भूमिका निभाने वाले एक-एक खिलाड़ी मैदान के बीचोंबीच आ जाते हैं। इन कप्तानों को ये लोग 'लेतू' या 'वारतू' कहते हैं जबकि खिलाड़ियों को 'भीरू' कहा जाता है। दोनों ही के मुखिया पांच बार अपने गीड़ा को परस्पर टकराते हैं। इस प्रक्रिया को 'कट्टिये' कहा जाता है। इसके बाद 'डोंटी' पर जोर आजमाकर खेल शुरू हो जाता है। फिर सिलसिला शुरू होता है 'बोड़ो' अर्थात् गोल करने का।

पूरी मस्ती के साथ झूमते हुए ये खिलाड़ी जब शोर के साथ 'गीड़ा' खेलने और 'बोड़ो' करने में जिस स्फूर्ति से उद्यत रहते हैं, तब कुलांचे भरते हुए हिरण भी इनके आगे बौने दिखाई देते हैं। दर्शक भी अपार आनन्द में भर कर इस खेल का नजारा देखते रहते हैं। गांवों में आज भी गीड़ा का खासा प्रचलन है और इसकी प्रतिस्पर्द्धाएं होती हैं। आसपास के गांवों की टीमों के बीच जब रोचक गीड़ा प्रतियोगिता होती है तब दोनों ही गांवों के निवासी उस तरह चारोंओर जमे रहते हैं जैसे खेलप्रेमी आजकल स्टेडियम में। वनवासी जीवन का मनोरंजक अंग बना हुआ यह खेल पीढ़ियों से चला आ रहा है।

खासकर सारे वनवासी अंचल में मकर संक्रांति पर इस खेल के दर्शन होते हैं और इस दिन यह खेल अपनी चरम सीमा पर होता है। आज भी ऐसे कई खेल वनवासी संस्कृति में रचे-बसे हैं और केवल प्राकृतिक उपहारों की मदद से ही खेले जाने वाले ये खेल यहां सदियों से लोकानुरंजन का साधन बने हुए हैं।

डॉ. महेन्द्र भानावत के अनुसार मेवाड़ अंचल में भी यह खेल बालकों में प्रचलित है। यहां इसे गीड़ा नहीं कहकर 'डोटा' कहते हैं। यह एक बड़ी गेंद अर्थात् दड़ी का रूप लिये होता है। इसे दड़ा भी कहते हैं। डोटे-दड़े को कपड़ों की कतरनों, कापों, चीन्दियों को एक-के-ऊपर-एक कट्ठा लपेटकर बनाया जाता है। इसके बाद सण की बनी सूतली या फिर कट्ठे पक्के धागों से इसे गूंथ दिया जाता है।

कलाप्रेमी शौकीन बच्चे इसे गूंथने के लिए रंगबिरंगे धागों की सहायता से कसते हुए गूंथते हैं। यह गूंथन आंकड़बांकड़ रूप में और कोई डिजाइन देते भी बनाई जाती है। डोटे को जिस लकड़ी से खेला जाता है उसे 'गेड़िया' कहते हैं। यह हॉकी स्टिक की ही तरह एक सिरे से मुड़ा हुआ होता है जो खांखरे यानी पलाश वृक्ष या फिर खजूर का होता है।

इसे दो दलों या पालों में बन्दकर खेला जाता है। एक-एक पाले में छह से बारह खिलाड़ी होते हैं। संक्रात का महीना इसे खेलने का खास समय होता है। संक्रांति पर तो गांव-गांव में बच्चे डोटा खेलते पाये जाते हैं। रात्रि को आग जलाकर इसे खेला जाता है। जब अग्नि की लपटों में डोटा जला-अधजला लपट देता खेला जाता है तो वह दृश्य बड़ा ही मनोहारी तथा आकर्षक लगता है जैसे सूरज के गोले से ही खेला जा रहा है।

संक्रांति से जुड़े अन्य खेलों में दड़ी से सम्बन्धित पड़ा-पाड़न्यो, मगरा डोटी, घोड़ी चढ़न्यो, गुल्ली-डण्डा, ताश के खेलों में दो मिलकर बेकी, तीन का तिकड़ी, चार का चौकड़ी, छह का छक्की खेल। कांकरों, पछेटों, कूंगसों तथा हप्पों के खेल। चिबटों के होरा-होरी जैसे खेल, लोड़ी सौत, बड़ी सौत, आंख मिचण्यो, ईडोरी पिडोरी जैसे मजेदारी एवं दिलचस्पी पैदा करने वाले उल्लेखनीय थे।

लेकिन समय के बदलते प्रवाह में हमारी प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं का तेजी से लोप हुआ जा रहा है। ऐसे में आजादी पूर्व हमारे जीवनचक्र में जो विविध रंजन, अनुरंजन तथा रहन-सहन के तौर-तरीके थे वे आज की पीढ़ी के लिए तो अकल्पनीय तथा अविश्वसनीय ही हैं।

डूँगरवाल ने आकाशवाणी में निदेशक का पदभार संभाला

उदयपुर (ह. सं.)। भारतीय प्रसारण सेवा के 1998 बैच के वरिष्ठ अधिकारी रवीन्द्र डूँगरवाल ने 13 मई को आकाशवाणी उदयपुर में निदेशक (अभियांत्रिकी) का पदभार संभाला। इस अवसर पर आकाशवाणी उदयपुर एवं जोधपुर क्लस्टर के केन्द्राध्यक्ष एवं उपमहानिदेशक राजेन्द्र नाहर ने डूँगरवाल को कार्यग्रहण करवाकर बताया कि डूँगरवाल आकाशवाणी उदयपुर केंद्र के अतिरिक्त राज्य के दक्षिण अंचल के 06 अन्य आकाशवाणी केन्द्रों के समन्वय का कार्य भी देखेगें। इससे पूर्व डूँगरवाल ने दूरदर्शन अहमदाबाद केन्द्र के निदेशक (अभि.) पद पर तीन वर्षो की सेवा के दौरान कई विशिष्ट कार्य किये एवं डी.डी. गिरनार चैनल को नया आयाम देने में उनका विशेष योगदान रहा। वे इससे पूर्व दूरदर्शन के उदयपुर एवं जयपुर केन्द्रो में भी वरिष्ठ पदों पर कार्यरत रहे हैं। उपमहानिदेशक नाहर ने बताया कि इनके कार्यकाल के दौरान दूरदर्शन उदयपुर केंद्र को राष्ट्रीय स्तर पर सर्वश्रेष्ठ अनुरक्षित केन्द्र के पुरस्कार से भी नवाजा जा चुका है। इस अवसर पर नाहर ने उन्हे शुभकामनाएँ दी एवं आकाशवाणी उदयपुर के अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने डूँगरवाल का स्वागत-अभिनन्दन किया। उल्लेखनीय है कि कानोड़ निवासी डूंगरवाल पं. उदय जैन के सुपौत्र हैं।

धन की मृगतृष्णा

-डॉ. रमेश 'मयंक'-

सांसारिक मनुष्य
परिग्रह-बुद्धि कौशल से
संचय करता धन,
भूमि-भवन; स्वर्ण-धान्य
सुख सुविधार्थ संसाधन मान्य।
धन से समृद्धि आती
सुखी जीवन निर्वाह निमित्ति
धन की उपलब्धता अनिवार्यतः
उपयोगी कहलाती,
धन प्राप्ति की लालसा
अंधी दौड़ की आसक्ति बढ़ाती।
पहले आदमी जितना कमाता था
उसमें से थोड़ा बचाता था
दान-पुण्य-धर्म-कर्म
पर भी खर्च करता था
जब आये संतोष धन,
सब धन धूरि समान का
विस्मरण नहीं करता था।
अब धन की अधिकता की आकांक्षा
सीमातीत होकर भी
चैन नहीं दिलाती
भोग-रोग, दुर्योग बढ़ते जायें तो भी
अति सर्वत्र वर्जयेत् की याद नहीं आती।
क्या मनुष्य का जीवन
धन से सुरक्षित रह जाएगा?
शान्ति का साधन बन पाएगा?
तृष्णा का विस्तार,
मृगतृष्णा की स्थिति से बचाएगा?
धन के लिए दूसरों को ठगना
पर-अधिकारों का हनन करना,
तिजोरियां भरना कर्म-व्यवहार का
क्रूरता के साथ गठबंधन करना
अन्याय-अनीति पूर्ण आचरण की तरफ
बढ़ते कदम रोक पाएगा?
धन अस्थायी है, चंचल है
किसी के साथ नहीं जाता
धन के आगमन से तिरोहित शान्ति
लुप्त संवेदना, सहृदयता
की समाप्ति जैसे
सत्य से अनभिज्ञ रह जाएगा?
अनुभवी ज्ञानी कहते हैं
धन से बढ़ता कारोबार,
लेकिन घटता आत्मिक
शान्ति का आधार
क्षणिक सुख के बाद
अभाव-दुःखों का दौर
लम्बा होता जाता
भ्रम का आवरण हटने में
अक्सर विलम्ब हो जाता।
मृत्यु से जब धन भी नहीं बचाता
तब धन की सुरक्षा की चिंता
व्यर्थ नज़र आती है
और धन-संचय से ज्यादा
धर्म-संचय की अवधारणा
उपयोगी बन जाती है।

तमिल साहित्य के संवर्धन में जैनों का योगदान

– डॉ. दिलीप धींग –

तमिल भाषा, व्याकरण, काव्य, साहित्य और संस्कृति के विकास में जैनों का ऐतिहासिक और अविस्मरणीय योगदान है। जैन-मुनियों, साध्वियों और जैन-विद्वानों ने गहन अध्ययन, परिश्रम, प्रज्ञा और प्रतिभा से उच्चकोटि के कालजयी तमिल साहित्य की रचना की। जैन मनीषियों द्वारा रचित साहित्य आज भी तमिल भाषा के मुख्य मानक ग्रंथों के रूप में सर्वपठित और समादृत हैं। विश्वविख्यात नीतिग्रंथ 'तिरुक्कुरल', सर्वप्राचीन तमिल लक्षण ग्रंथ 'तोलकाप्पियम्', सर्वप्रचलित व्याकरण ग्रंथ 'नन्नूल', महाकाव्य 'शिलप्पदिकारम्' और 'जीवक चिंतामणि', पाँच लघु महाकाव्य आदि जैनों द्वारा रचित अनेक ग्रंथ आज भी तमिल साहित्य और भारतीय संस्कृति को प्रकाशमान बनाए हुए हैं। ये ग्रंथ सम्पूर्ण मानवता के पथ को आलोकित कर रहे हैं।

दक्षिण भारत में जैन श्रमणों और गृहस्थ विद्वानों ने कई प्रकार का योगदान किया। उसमें उनका साहित्यिक योगदान भी अत्यन्त गौरवपूर्ण, अप्रतिम और ऐतिहासिक महत्त्व का है। तमिलनाडु के पूर्व मुख्यमंत्री एवं तमिल साहित्य के विद्वान लेखक डॉ. मुथ्थुवेल करुणानिधि ने जैनों के योगदान को रेखांकित करते हुए 23 दिसम्बर 1974 को लिखा था- ''जैनधर्म एक प्राचीन धर्म है, जो ईसा मसीह के जन्म से भी सैकड़ों वर्ष पहले भारत में अस्तित्व में आया था। प्रसिद्ध तमिल वैयाकरण तोलकाप्पियर के काल से काफी पहले, जैन धर्म तमिलनाडु में फल-फूल रहा था। गुणवान तमिल जैनों ने हमारी 'तमिल माता' को साहित्यिक कृतियों के असंख्य रत्नों से सुशोभित किया है। यदि आप समणों (जैनों) की इन कृतियों को अलग कर दें तो तमिल साहित्य की दुनिया वीरान हो जाएगी।''

तमिल प्रदेश में रहकर जैनों ने अपने उदात्त विचार, विशुद्ध आचार, प्रामाणिक व्यवहार, व्यापक लोकोपकार और विपुल सेवाओं से राजा और प्रजा, सबके हृदय में अपना स्थान और सम्मान बनाया।

यही वजह रही कि जैनधर्म को राज्याश्रय भी प्राप्त हुआ। जैनों ने जनता, समाज और शासन के साथ मिलकर कार्य किया। जैनों ने अनेक ऐसे ग्रंथ रचे, जो तमिल भाषा, व्याकरण, साहित्य और संस्कृति की श्रीवृद्धि में आज भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। जैनों के उस उत्कर्ष काल में काँचीनगरी (काँचीपुरम्) का जीता-जागता वर्णन चीनी यात्री ह्यूवॉन साँग के यात्रा-विवरण से भी प्राप्त होता है।

काव्य-रचना के क्षेत्र में तो जैनों की विरासत अविस्मरणीय है। तमिल साहित्य में अति प्राचीन पाँच महाकाव्यों (ऐम्पेरुम् काप्पियम्) का अत्यधिक महत्त्व है। ये पाँच ग्रंथ हैं- शिलप्पदिकारम्, मणिमेखलै, जीवक चिंतामणि, वलैयापति और कुण्डलकेशी। इन पाँच महाकाव्यों में से तीन महाकाव्य जैनों द्वारा लिखे गये हैं- शिलप्पदिकारम्, जीवक चिंतामणि और वलैयापति। इनमें से शिलप्पदिकारम् और जीवक चिंतामणि आज भी उपलब्ध हैं। वलैयापति की सिर्फ सौ पंक्तियाँ वर्तमान में उपलब्ध है।

भारतीय साहित्य में सुभाषित ग्रंथों की समृद्ध परम्परा में तमिल ग्रंथ नालडियार का विशिष्ट स्थान है। 'नालडियार' या 'नालडिनानूरु' का तात्पर्य है- चार चरण वाले चार सौ छंद या काव्यपद। इसकी रचना की रोचक कहानी है। उस समय नीलगिरि, क्रौंच, गोवर्धन, श्रीकूट, रांची, अन्नामलै, हेमकूट, विंध्य आदि क्षेत्रों में लगभग आठ हजार जैन श्रमण-श्रमणियाँ विचरण कर रहे थे। जब इन क्षेत्रों में अकाल पड़ गया तो वे मुनिसंघ पांड्यप्रदेश में आ गए। पांड्यप्रदेश में राजा व प्रजा, दोनों ने साधु-साध्वियों की साधना व प्रवास में सहयोग दिया। राजा ने उन जैन संतों की विद्वत्ता से प्रभावित होकर उन्हें 'सभा-कवि' का सम्मान भी दिया।

समय के साथ दुर्भिक्ष समाप्त हो गया। श्रमणाचार के अनुसार संतों को अकारण एक ही स्थान पर अधिक समय तक नहीं ठहरना चाहिये। अत: साधु-साध्वी वहाँ से विहार करने लगे। राजा ने श्रद्धावश उनसे रुकने की विनती की। साधु-साध्वियों को अपने नियम के अनुसार जाना था, इसलिए उन्होंने एक दिन चुपचाप विहार कर दिया लेकिन विहार से पूर्व उन संतों ने अपने द्वारा रचित आठ हजार उपदेश-पदों की पांडुलिपियाँ वहीं छोड़ दीं। संतों के इस तरह अचानक विहार से राजा को बहुत दु:ख हुआ। इस दु:ख में राजा ने उन आठ हजार पदों को नदी

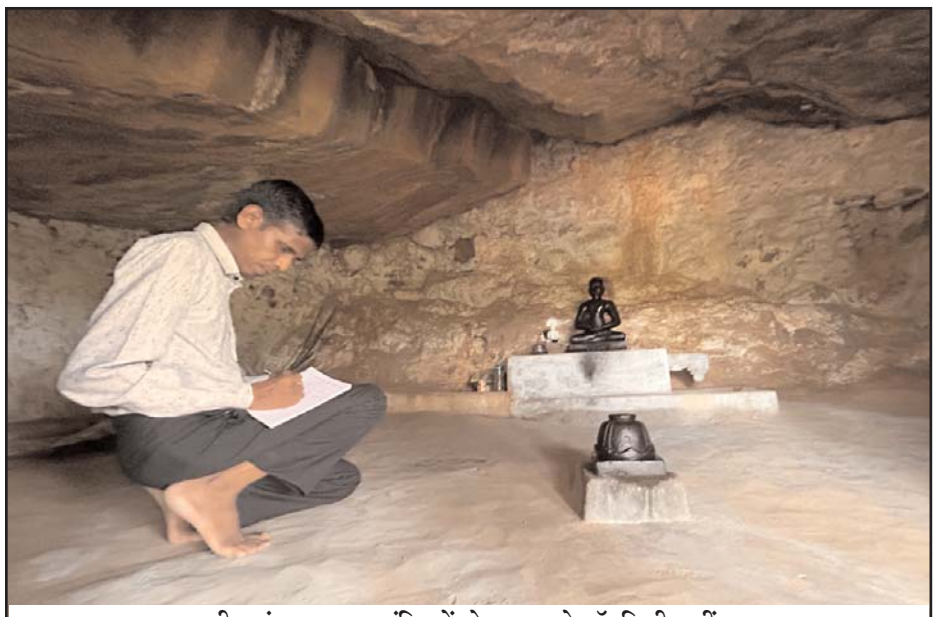

सीयामंगलम गुफा मंदिर में लेखन करते डॉ. दिलीप धींग

में फिंकवा दिया। आश्चर्य यह था कि उनमें से चार सौ पद नदी की धारा में नहीं डूबे। उनकी पांडुलिपियाँ चमत्कारिक ढंग से प्रवाह में नहीं जाकर पुन: तट पर आ गईं। इससे राजा विस्मित और श्रद्धाभिभूत हो उठा। राजा ने उन पांडुलिपियों को संभालकर सुरक्षित रख लिया। सातवीं सदी के जैनाचार्य पदुमनार ने उन पदों को व्यवस्थित वर्गीकृत करके 'नालडियार' नाम दिया। इसमें संकलित काव्यपद सातवीं सदी से पूर्व के हैं।

तिरुक्कुरल की तरह इस ग्रंथ में तीन खंड

तिरुमलै की तलहटी में नवनिर्मित मंदिर में भट्टारक धवलकीर्ति से चर्चा करते डॉ. धींग

हैं- धर्म, अर्थ और काम। धर्म खंड में श्रमण (सन्यास) और श्रावक (गृहस्थ) धर्म विषयक अध्याय हैं। इसमें कुल 13 अध्याय हैं। अर्थ खंड में 24 और काम खंड में 3 अध्याय हैं। जैनाचार्य ने तिरुवल्लुवर की तरह हर अध्याय में विषय के अनुसार दस पद संजोए। इस प्रकार इस ग्रंथ के कुल 40 अध्यायों में चार सौ पद हैं। यह ग्रंथ कहता है कि अर्थ और काम पुरुषार्थ धर्मपूर्वक होने से चौथे मोक्ष पुरुषार्थ की साधना व प्राप्ति सुगम हो जाती है। मानवीय मूल्यों और मर्यादाओं का यह उत्तम ग्रंथ है। इसमें बहुत ही सरस पद्धति से जीने की श्रेष्ठ कला बताई गई है।

नन्नूल नामक तमिल व्याकरण की रचना बारहवीं सदी में जैन संत भवनंदि भट्टारक ने की। यह बहुत ही अच्छा व्याकरण माना जाता है। आज भी यह तमिल विद्यार्थियों के लिए पाठ्यपुस्तक के रूप में सर्वमान्य ग्रंथ है। प्राचीन व्याकरण ग्रंथ तोलकाप्पियम् के समान ही इसका महत्त्व स्वीकृत है। विषय की व्यापकता और स्पष्टता की दृष्टि से इस ग्रंथ के समकक्ष परवर्ती काल का अन्य कोई ग्रंथ नहीं है। इसमें लिखित और बोलचाल की तमिल भाषा एवं भाषा के ध्वनि विज्ञान और रूप विज्ञान पर अच्छा प्रकाश डाला गया है।

'याप्पेरुम् कलविरुत्ति' और 'याप्पेरुम् कलकारिकै' ग्यारहवीं सदी की कृतियाँ हैं। इनकी रचना जैन मुनि अमुदसागरर (अमृतसागर) ने की। इसमें तमिल छंदों का विस्तृत विवेचन किया गया है। संस्कृत से तमिल में लिखे गये वर्णवृत्त छंदों के भेदों का विवेचन भी इसमें किया गया है। जैन विद्वान गुणशेखर ने इन पर सुन्दर टीकाएँ लिखी हैं। छंद शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक तमिल छात्रों के लिए इन ग्रंथों का अध्ययन आवश्यक माना जाता है।

जैन मुनि मुत्तुरै अरैयनार ने पलमोलि नानूरु की रचना की। ग्रंथ के आरंभ में अशोक वृक्ष के नीचे ध्यानस्थ अरिहंत परमात्मा की वंदना की गई है। इसमें संकलित चार सौ पदों में हर एक के साथ एक-एक कहावत (पल्मोलि) मिली हुई है।

सिरुपंचमूलम् एक नीति ग्रंथ है। इसके लेखक करियासन एक जैन साधु थे। इसमें सौ कविताएँ हैं। हर कविता में पाँच-पाँच उपदेश हैं। एलादि जैन विद्वान मणिमतव्यार द्वारा रचित है। इस काव्य के 80 पदों में छह-छह उपदेश हैं। एलादि के लेखक ने प्रेम-सिद्धांत पर भी एक काव्य रचा है, जिसका नाम है- 'तिणै मालै नूट्रैम्बदू'। इसमें 153 पद हैं।

तमिल साहित्य की श्रीवृद्धि में जैनों द्वारा रचित और भी अनेक ग्रंथ हैं। जैसे ऐंतिणै एशुपदु (मूवात्तियर रचित), तिरुनूट्रन्दादि (अविरोधीनाथर मुनि रचित), चूड़ामणि निघंटु (मण्डल पुरुष रचित), अरनेरिच्चार, मेकवर पुराण, किलिविरुत्तम्, नरिविरुत्तम्, एलिविरुत्तम् आदि अनेक कृतियाँ जैन संतों या विद्वानों द्वारा रची गई हैं।

तमिल में तीन औव्वैयार नामक महिला रचनाकारों का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है। जनजीवन में प्रथम औव्वैयार विशेष श्रद्धास्पद है। परम्परा के अनुसार प्रथम औव्वैयार को तिरुवल्लुवर की बहिन माना जाता है। वे यशस्वी कवयित्री और बड़ी नीतिविज्ञ महिला थीं। संगम काल में उन्होंने अनेक गीतों और कविताओं की रचना की थीं।

इन सब ग्रंथों और रचनाओं के अलावा भी जैनों ने अनेक विषयों और विधाओं में तमिल साहित्य का सृजन किया। सन् 470 के आसपास वज्रनंदि ने द्रविड़ जैन संघ बनाया था, जिसके अंतर्गत साहित्य विकास के कार्य भी होते थे। इसी समय कवि अरुणकालन् वैयादर ने 'अरुणकाल चेम्पु' और कवि मुनैप्पाडियार ने 'अरनेरिसारम्' नामक नीतिग्रंथों की रचना की। 'नेल इलक्कण वाय्प्पाडु', 'सिरुक्कुशि वाय्प्पाडु', 'जिनेन्द्रमालै', 'वन्नूल' आदि ग्रंथों की रचना भी जैनों ने की। संगम साहित्य की अनेक कृतियों पर जैनों का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

श्रीपुराण, गद्य चिंतामणि आदि अनेक गद्य ग्रंथ भी जैन विद्वानों ने रचे हैं। इन दोनों गद्य ग्रंथों की तमिल भाषा संस्कृत मिश्रित है। इसे मणिप्रवाल शैली कहा जाता है। तमिल विद्वानों ने इस शैली को ठीक नहीं माना है। उनका मानना है कि इस प्रकार के मिश्रण से तमिल की स्वाभाविकता और सुन्दरता नष्ट हो जाती है। जैनों द्वारा रचित तमिल साहित्य में कई विशिष्ट तथ्य मिलते हैं। जैसे,

1. कुछ कृतियों में रचनाकार का नाम नहीं मिलता है।

2. सांसारिक जीवन की रंग-बिरंगी पगडंडियों से गुजरती हुई कथा अंत में संयम के मार्ग पर बढ़ जाती है।

3. इन कथाओं में खलनायक मानव नहीं होता, अपितु मानव द्वारा ही किये बुरे कर्म या पाप होते हैं।

4. सर्वत्र अहिंसा, जीवरक्षा और सहिष्णुता के स्वर गूंजते हैं।

5. सफलता और आत्म-विजय के लिए पुरुषार्थ, तप, आराधना आदि पर बल दिया जाता है।

यदि गौर किया जाए तो किसी भी भाषा के जैन साहित्य या जैन मनीषियों द्वारा रचित साहित्य में इस प्रकार की विशेषताएँ मिल जाती हैं। जैनों ने गणित, ज्योतिष, खगोल-भूगोल, कोष-विज्ञान, वास्तुशिल्प, ललितकला विषयक पुस्तकें रचकर भी तमिल साहित्य-संपदा को समृद्ध किया है। समग्र तमिल साहित्य का निष्पक्ष लेखा-जोखा और शोधात्मक परिशीलन किया जाए तो अनेक महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त हो सकते हैं।

तमिलनाडु में लगभग 600 जैन शिलालेखों का विवरण उपलब्ध है। यदि खोज जारी रहे तो और भी अभिलेख मिल सकते हैं। इस प्रदेश का कोई जिला ऐसा नहीं है, जहाँ कोई जैन अभिलेख उपलब्ध नहीं हो। ये अभिलेख गुफाओं, चट्टानों, स्तंभों, मन्दिर की दीवारों, मूर्तियों की पीठिकाओं आदि पर खुदे हुए हैं। ये शिलालेख ब्राह्मी और तमिल लिपि में लिखे मिलते हैं। ये शिलालेख ईस्वी पूर्व तीसरी सदी से मिलते हैं। तमिल लिपि का प्रथम शिलालेखीय प्रमाण जैन गुफाओं में ही प्राप्त होता है। ये अभिलेख तमिलनाडु के राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक जीवन पर ऐतिहासिक प्रकाश डालते हैं।

मौलिक कृतियों और अभिलेखों के अलावा प्राकृत और संस्कृत साहित्य के तमिल में अनुवाद के द्वारा भी जैनों ने तमिल साहित्य के विकास में उल्लेखनीय योगदान किया। प्राकृत और संस्कृत साहित्य की अनेक विधाओं, कलाओं, कथाओं, विचारों और तत्वज्ञान को नई भावभूमि और नई भाषाशैली में तमिल में लाने का कार्य जैन मनीषियों ने किया। उस समय के साहित्य व संस्कृतिप्रेमी शासक और श्रेष्ठिजन भी जैनों की साहित्य-साधना में सहयोगी बने।

मध्यकाल में एक समय ऐसा भी आया, जब जैनों के बहुविध उपकारों और बढ़ते प्रभाव को अन्य मतावलम्बी सहन नहीं कर पाए। सातवीं शताब्दी के उस काल में छल-बल, क्रूरता और कायरतापूर्ण तरीकों से जैनों पर अमानवीय अत्याचार हुए। अहिंसा के उपासक जैन मुनियों और जैन धर्मावलम्बी स्त्री-पुरुषों की सामूहिक हत्याएँ की गईं।

जैन संस्कृति के गौरवशाली प्रतिमानों को अकल्पनीय क्षति पहुँचाई गई। उस बुरे काल में जैनों द्वारा रचित तमिल साहित्य और तमिल जैन साहित्य का भी भारी नुकसान हुआ। अनेक दुर्धर्ष संघर्षों के बावजूद जैनों ने ज्ञान की अलख जगाए रखी, जिसका उजाला आज भी तमिल प्रदेश में बिखरा हुआ है और जन-जन को आलोकित कर रहा है।

बाजार / समाचार

अनिशा को अमेरिका से एम.बी.ए. डिग्री अवार्ड

अमेरिका के इलिनॉयस इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी विश्वविद्यालय द्वारा अनिशा जैन को डेटा साइंस में एम.बी.ए. की डिग्री अवार्ड हुई। यह डिग्री प्रबंध

विभाग स्टूआर्ट स्कूल ऑफ बिजनेस के डीन लिएड वाउगमैन द्वारा प्रदान की गई। एम.बी.ए. अवार्ड होने पर अनिशा को मेहता, बैंगानी एवं भानावत परिवार ने बधाई देते हुए शुभकामनाएं प्रेषित कीं।

अनिशा ने बताया कि इस अध्ययन में मुख्य सहयोगी विकल्प रहे। इस अवसर पर डॉ. महेन्द्र भानावत, डॉ. तुक्तक-रंजना, डॉ. कविता-डॉ. सतीश मेहता, सुमित्रा, पुष्पा, गुणबाला, डॉ. कहानी-जितेन्द्र मेहता, राकेश-सुनीता बैंगानी, डॉ. शूरवीरसिंह भाणावत, राजीव भानावत, संजीव भानावत सहित अनेक लोगों ने शुभकामनाएं प्रेषित कर बधाई दी। **- विकल्प मेहता**

चक्रवर्ती अंशकालिक अध्यक्ष एवं स्वतंत्र निदेशक बने

उदयपुर (ह. सं.)। अतनु चक्रवर्ती की एचडीएफसी बैंक लि.में अंशकालिक अध्यक्ष और स्वतंत्र निदेशक के रूप में पुन: नियुक्ति की गई है। रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया ने 2 मई को इस नियुक्ति को स्वीकृति प्रदान की जिसके

पश्चात् एचडीएफसी बैंक लि. के निदेशक मण्डल ने इस निर्णय को स्वीकृत कर दिया। अतनु चक्रवर्ती वर्तमान में एचडीएफसी बैंक लिमिटेड के अंशकालिक अध्यक्ष और स्वतंत्र निदेशक हैं। उन्होंने गुजरात कैडर में भारतीय प्रशासनिक सेवा (आईएएस) के सदस्य के रूप में पैंतीस वर्षों की अवधि तक भारत सरकार की सेवा की। उन्होंने मुख्य रूप से वित्त और आर्थिक नीति, बुनियादी ढांचे, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के क्षेत्रों में काम किया है। केंद्र सरकार में उन्होंने विभिन्न पदों पर कार्य किया। वित्त वर्ष 2019-20 के दौरान वित्त मंत्रालय- आर्थिक मामलों के विभाग (डीईए) में भारत सरकार के सचिव जैसे पद (डीईए) के रूप में, उन्होंने सभी मंत्रालयों/विभागों के लिए आर्थिक नीति निर्माण का समन्वय किया और संसद में इसके पारित होने सहित भारत संघ के लिए बजट निर्माण की पूरी प्रक्रिया का प्रबंधन किया।

नई सरलीकृत रेट कार्ड नीति घोषित

उदयपुर (ह. सं.)। फ्लिपकार्ट ने बिल्कुल नई सरलीकृत रेट कार्ड नीति की घोषणा की है। इसका उद्देश्य फ्लिपकार्ट के प्लेटफॉर्म पर विक्रेताओं के अनुभव में क्रांतिकारी बदलाव लाना और सेटलमेंट में अधिक स्पष्टता लाना है।

18 मई से प्रभावी हो रहे नए रेट कार्ड की मुख्य विशेषताओं में सरलीकृत रेट कार्ड स्ट्रक्चर और किफायती एफबीएफ दरें शामिल हैं,जिनसे बड़े पैमाने पर परिचालन को सुव्यवस्थित करने के लिए प्रतिस्पर्धी बढ़त मिलती है। इनके अलावा, एक अपडेटेड शिपिंग नीति भी इसका हिस्सा है, जो विक्रेताओं को अपने ग्राहकों को उचित मूल्य प्रदान करने में सक्षम बनाती है। सरलीकृत रेट कार्ड के माध्यम से यह परिवर्तनकारी पहल विकास के समान अवसरों को बढ़ावा देगी। यह पहल विक्रेताओं को सशक्त बनाने की दिशा में फ्लिपकार्ट की प्रतिबद्धता को दर्शाती है। विक्रेता रेट कार्ड में किए गए संशोधनों के लाभ एवं निहितार्थ को समझें, इसके लिए एक व्यापक शैक्षिक रणनीति भी लागू की गई है।

एचडीएफसी बैंक ने पेश किया 'पिक्सेल'

उदयपुर (ह. सं.)। एचडीएफसी बैंक ने 'पिक्सेल' के लॉन्च की घोषणा की है। यह डिजिटल मूल निवासियों के लिए डिज़ाइन की गई अपनी तरह की पहली 'एंड-टू-एंड' मोबाइल ऐप है, जो डीआईवाई आधारित अनुकूलन योग्य डिजिटल कार्ड रेंज है। पिक्सेल को डिजिटल प्रवाह, अद्वितीय प्राथमिकताओं और विशिष्ट वित्तीय व्यवहारों वाली पीढ़ी के लिए तैयार किया गया है। पिक्सेल डिजिटल क्रेडिट कार्ड श्रेणी में यह अपनी तरह की पहली श्रृंखला है जो निर्बाध ऐप-आधारित जारी करने हेतु पूर्ण डिजिटल जीवनचक्र प्रबंधन, उपयोगकर्ता जुड़ाव और डिजिटल सेवाएं प्रदान करती है।

एचडीएफसी बैंक के कंट्री हेड - पेमेंट्स, लायबिलिटी प्रोडक्ट्स, कंज्यूमर फाइनेंस एंड मार्केटिंग पराग राव ने कहा कि इसके अलावा, पिक्सेल के माध्यम से, बैंक ग्राहकों को अपनी पसंदीदा श्रेणियां और पसंदीदा व्यापारी/प्लेटफ़ॉर्म जैसे कि जोमाटो, मिंत्रा, बुक माई शो, मेक माई ट्रिप, अमेज़ॅन, और फ्लिपकार्ट आदि का चयन करने में सक्षम बनाकर उन्हें अनुकूलन और पसंद करने की शक्ति देता है। ऐसा करने पर ग्राहक इन व्यापारियों/प्लेटफ़ॉर्म से अपने खर्च पर आकर्षक कैशबैक अर्जित कर सकते हैं। वर्तमान और नए दोनों ग्राहक बैंक के पेज़ैप मोबाइल एप्लिकेशन के माध्यम से पिक्सेल क्रेडिट कार्ड के लिए आवेदन कर सकते हैं। पिक्सेल को 2 वेरिएंट में पेश किया जाएगा - 'पिक्सेल प्ले' और 'पिक्सेल गो', दोनों कार्ड वेरिएंट 50 दिनों तक की क्रेडिट मुक्त अवधि की पेशकश करते हैं।

श्वांसनली से मक्के का दाना निकाल दिया बच्ची को नया जीवन

उदयपुर (ह. सं.)। पेसिफिक मेडिकल कॉलेज एण्ड हॉस्पिटल के कान नाक एवं गला रोग विभाग के चिकित्सकों ने तीन साल की बच्ची की श्वांस नली में फंसे मक्के के दाने को निकाल कर उसे नया जीवन दिया।

मंदसौर निवासी तीन वर्षीय बच्ची रियॉसी ने मक्के का दाना निगल लिया जो श्वासं नली में फंस गया। इसके बच्ची को लगातार खांसी और सीने में दर्द के साथ श्वास लेने में परेशानी होने लगी। बच्ची को परिजन तुरन्त पीएमसीएच की इमरजेन्सी में लेकर आए। यहां कान नाक एवं गला रोग विशेषज्ञ डॉ. शिव कौशिक ने तर्परता दिखाते हुए तुरन्त बच्ची की जांच कराई जिसमें पता चला कि बच्ची के दोनों फेफड़ों के बीच श्वासंनली में कुछ बीज जैसा फंसा हुआ है। चिकित्सकों की टीम ने बिना समय गंवाए बच्ची की बॉन्कोस्कापी की एवं सफलतापूर्वक मक्के के दाने का निकाल दिया। इस सफल ऑपरेशन में कान, नाक एवं गला रोग विभाग के डॉ. एस. एस. कौशिक, डॉ. रिचा गुप्ता, डॉ. प्रकाश औदित्य, डॉ.समीर गोयल एवं टीम का सहयोग रहा।

डॉ. शिव कौशिक ने स्पष्ट किया कि अगर ऑपरेशन में देरी हो जाती तो मक्के के दाने के फूलने के कारण श्वासंनली बन्द होने से बच्ची की जान भी जा सकती थी। परिजनों ने पीएमसीएच के चेयरमेन राहुल अग्रवाल, एक्जीक्यूटिव डॉयरेक्टर अमन अग्रवाल, सभी चिकित्सकों, मैनेजमेंट, नर्सिंग कर्मियों एवं स्टाफ का आभार जताया।

हर्निया पर 150 से अधिक सर्जन्स ने साझा किए अनुभव

उदयपुर (ह. सं.)। हर्निया रोग पर पेसिफिक मेडिकल कॉलेज एंड हॉस्पिटल में 'ए स्टेप अहेड इन हर्निया सर्जरी' विषयक नेशनल कॉन्फ्रेंस का उद्घाटन शनिवार को हुआ। शांतिराज हॉस्पिटल एवं एडब्ल्यूआर सर्जनस की ओर से आयोजित कॉन्फ्रेंस में देशभर के 150 से अधिक सर्जन्स ने अपने अनुभवों को साझा किया। उद्घाटन आरएनटी मेडिकल कॉलेज प्राचार्य डॉ. विपिन माथुर, आईएमए उदयपुर प्रेसीडेंट डॉ. आनंद गुप्ता, सीनियर कैंसर सर्जन डॉ. अशोक जैन, पीएमसीएच वाइस चांसलर डॉ. एम.एम. मंगल, लेप्रोस्कोपिक सर्जन डॉ. सपन अशोक जैन, फेसिलिटी डायरेक्टर पारस डॉ. एबल जॉर्ज ने दीप प्रज्वलित कर किया।

कॉन्फ्रेंस का पहला सत्र 'हर्निया टू एडब्ल्यूआर' पर हुआ जिसके मुख्य वक्ता डॉ. बी रमन्न थे। दूसरा सत्र 'इमेजिन फॉर वेंटरल हर्निया' पर हुआ जिसके मुख्य वक्ता डॉ. कपिल अग्रवाल थे। तीसरा सत्र 'कॉन्सेप्ट ऑफ कोम्पोनेंट सेपरेशन' पर हुआ। इसके मुख्य वक्ता डॉ. गणेश शिनोय के थे। चौथा सत्र 'कॉम्प्लेक्स हर्निया विथ लोस ऑफ डोमिन' पर हुआ। इसके मुख्य वक्ता प्रोफेसर डॉ. जिग्नेश गांधी थे। पांचवां सत्र ईटीप कॉन्सेंप्ट एंड एक्सेस टू ईटेप स्पेस पर हुआ। इसके मुख्य वक्ता प्रोफेसर डॉ. जिग्नेश गांधी थे। छठां सत्र 'बायोसिंथेटिक मेश ! इज इट वर्थ इट्स मनी' पर हुआ। इसके मुख्य वक्ता डॉ. अनुपम गोल थे। सातवां सत्र 'प्रोपेरेटिवे एडजंक्टस बोटॉक्स, पीपीपी' पर हुआ। इसके मुख्य वक्ता डॉ. अरविंद गनगोरिया थे। आठवां सत्र 'अम्बिलिकल हर्निया' पर हुआ। इसके मुख्य वक्ता डॉ. सी. पी. सिंह थे। नवां सत्र 'टिश्यू ट्रैक्शन प्रोसीजर' पर हुआ जिसके मुख्य वक्ता डॉ. जिग्नेश गांधी थे। कांफ्रेंस के अंत में डॉ. सपन अशोक जैन एवं टीम ने धन्यवाद ज्ञापित किया। इससे पूर्व रजिस्ट्रेशन के बाद मास्टर विडियोज, मॉडरेटर, पैनलिस्ट तथा पीजी पोस्टर की प्रस्तुति हुई जिसके निर्णायक डॉ. मुक्ता एस., डॉ. निलेश एम. तथा डॉ. कुमावत थे। कांफ्रेंस में असिराज, उदयपुर सर्जिकल सोसायटी एवं पेसिफिक मेडिकल कॉलेज एंड हॉस्पिटल (पीएमसीएच) का विशेष सहयोग रहा।

टखमण के संस्थापक प्रो. वर्मा नहीं रहे

प्रो. एल. एल. वर्मा

14 मई 2024 को उदयपुर में 1944 में जन्में ख्यातनाम चित्रकार प्रो. एल. एल. वर्मा का हृदयाघात से निधन हो गया। प्रो. सुरेश शर्मा और प्रो. एल. एल. वर्मा दोनों की जोड़ी समानधर्मी कलाबन्धु 'शर्मा वर्मा' के नाम से दूर-दूर तक जानी गई। दोनों ने 'टखमण' नामक कला संस्था की स्थापना कर अनेक कलाकारों को मंच दिया। अनेक नये कलाकार तैयार किये जो भारत-ख्यात बने।

याद पड़ता है, टखमण की स्वर्ण जयंती पर लगभग सौ कलाकारों को आमंत्रित कर अविस्मरणीय उपलब्धि दी। टखमण में कला संग्रहालय, ग्राफिक स्टूडियो उनकी विशिष्ट देन रही। सन् 1989-90 में मैंने चित्रकला में एम.ए. किया। वे छात्रों में बड़े सहज, लोकप्रिय तथा मधुर स्वभाव लिये थे। उनकी प्रेरणा से मैंने पीएच.डी. की। वे लोककला के क्षेत्र में काम करने को भी सदैव प्रोत्साहित करते रहे। सुखाड़िया विश्वविद्यालय में उनके बाद भी उन्हीं के तैयार किये कलाकार अध्यापनरत हैं। कला जगत की ऐसी अपूरणीय क्षति पर सभी कलाकार उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि देते हैं।

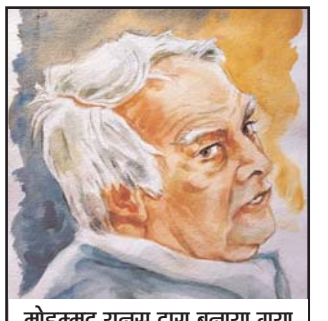

मोहम्मद युनूस द्वारा बनाया गया प्रो. एल. एल. वर्मा का पोट्रेट

- डॉ. कहानी भानावत

फ्री केम्प में 150 से अधिक बच्चों को दिया परामर्श

उदयपुर (ह. सं.)। पेसिफिक इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज, पिम्स उमरड़ा की ओर से द ओमकार स्कूल अम्बामाता में नि:शुल्क स्वास्थ्य परीक्षण शिविर आयोजित किया गया। शिविर में विशेषज्ञ चिकित्सकों ने 150 से अधिक विद्यार्थियों व उनके परिजनों को नि:शुल्क परामर्श दिया। कुछ बच्चों को आवश्यक दवाइयां भी दी गयी। पिम्स द्वारा शहर और आसपास के क्षेत्रों में समय. समय पर नि:शुल्क परामर्श शिविरों का आयोजन किया जाता है।

संघ चेयरपर्सन आशीष अग्रवाल ने बताया कि पिम्स की ओर से आमजन को स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करने के लिए विभिन्न तरह के आयोजन किये जाते हैं। स्वास्थ्य ही प्राथमिकता के तहत द ओमकार स्कूल अम्बामाता में नि:शुल्क स्वास्थ्य परामर्श एवं दवाई वितरण केम्प रखा गया। यहां बच्चों के लिए शिशु रोग विशेषज्ञों, परिजनों के लिए नाक, कान, गला रोग विशेषज्ञ तथा जनरल मेडिसिन व अन्य चिकित्सकों ने नि:शुल्क परामर्श दिया। चिकित्सकों ने रक्त की जांच भी की। बच्चों को आवश्यक दवाइयां भी वितरित की गयी। डॉक्टर्स ने कहा कि कुछ बच्चों व बड़ों में हिमोग्लोविन की कमी पायी गयी। यहां चिकित्सकों ने गर्मी से बचने के लिए उचित टिप्स भी दी।

बिग बॉस

माधव नागदा

रामबाबू को बॉस दो बार अपने कमरे में बुला चुके हैं। वही सुहालका एण्ड सुहालका के टेण्डर वाला मामला। बीस कम हैं तो क्या। प्रताप एण्ड सन्स को किसी तरह रिजेक्ट कर दो। बहुत से दांव-पेंच हैं। आप से पहले वाले एकाउंटेंट श्यामबाबू करते ही थे।

कोई बाल तक बांका नहीं कर सका। और सुनो। जब दुबारा बुलावा आया तो साहब ने संकेत कर ही दिया। सुर को जरा धीमा करके बोले, पहुँची हुई पार्टी है। करोड़पति। एक पेटी का ऑफर दिया है। आधी तुम्हारी। बस! खुश! फिर ठहाका लगाते हुए कहा, 'रामजी,सब कर रहे हैं आजकल। समझ गये न? इसलिए बेधड़क रहो और अभी का अभी फाइनल कर दो।'

रामबाबू चुपचाप अपनी सीट पर आकर बैठ गये। बैठे रहे। अपने आप में डूबे हुऐ से। एकाएक उन्होंने सुहालका वाली फाइल एक तरफ पटक दी और प्रताप एण्ड सन्स को पास कर ठप्पे लगाने लगे। जोर-जोर से। इतने में रोड़ीलाल ने आकर कहा, 'रामबाबूजी, बॉस ने पुछवाया है कि उन्होंने जो काम कहा वह हो गया क्या?'

'नहीं हुआ रोड़ीलाल। बॉस को कहना कि बिग बॉस ने मना कर दिया है।'

रोड़ीलाल नासमझ की तरह खड़ा रहा। फिर हिम्मत बटोरकर सवाल किया, 'रामबाबूजी, ये बिग बॉस कौन है? कहां है इसका ऑफिस?'

'बिग बॉस हम सबके भीतर रहता है रोड़ीलाल। हरदम चिल्लाता रहता है कि यह ठीक है, यह गलत है मगर आजकल उसकी सुनता कौन है।' रामबाबू ने दार्शनिक अंदाज में कहा, 'खैर तुम नहीं समझोगे। यह फाइल लेते जाओ। साहब की टेबल पर पटक देना।' रोड़ीलाल जाते-जाते ठिठक गया। कहने लगा, 'मैं सब समझ गया। मेरा बिग बॉस कहता है कि आप सच्चे आदमी हो।'

शब्द रंजन--- ज्ञान रंजन और बहु रंजन भी

शब्द रंजन केवल शब्दों का रंजन ही नहीं, सरस्वती का अनुरंजन भी है। इसमें आपकी बड़भागी आहुति इस रूप में भी हो सकती है। अपने प्रतिष्ठान तथा प्रियजनों की स्मृति निमित्त विज्ञापन सहयोग करें।

मुख पृष्ठ	10,000/- रूपये
अंतिम पृष्ठ	7000/- रूपये
साधारण पृष्ठ	5000/- रूपये
आधा पृष्ठ	3000/- रूपये
चौथाई पृष्ठ	2000/- रूपये
सदस्यता शुल्क :	
संरक्षक	11000/- रूपये
विशिष्ट सदस्य	5000/- रूपये
आजीवन सदस्य	3000/- रूपये
शब्द रंजन के सहयात्री	1500/- रूपये
साहित्यिक चौपाल	1000/- रूपये
वार्षिक संस्थागत	500/- रूपये
वार्षिक व्यक्तिगत	300/- रूपये

Shabd Ranjan, UCO BANK,
Bhupalpura Branch, Udaipur,
a/c no. 18450210000908,
IFSC no. UCBA0001845, a/c type- Current a/c
कृपया रचनाएं, समाचार एवं विज्ञापन आदि ई-मेल से भेजें।
shabdranjanudr@gmail.com

कुक्की ने खोजी तीर्थंकरों की अलभ्य मूर्तियां

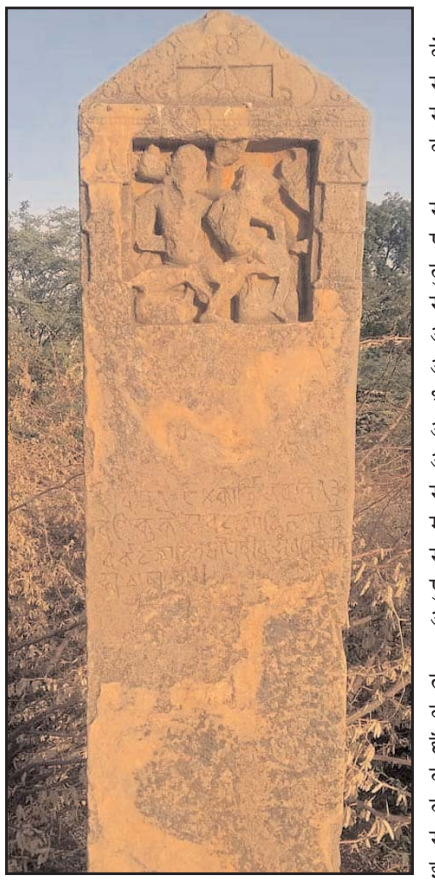

बूंदी (ह. सं)। राजस्थान के बूंदी जिले से 65 किलोमीटर दूर नैनवा गांव के तालाब के पास एक छोटी पहाड़ी अलग-अलग संवत् के आठ निषिद्ध स्तम्भ एक ही लाइन में बने हुए मिले हैं। ये स्तम्भ संवत् 1000 से 1500 के समय के हैं। शायद बहुत सी पीढ़ियों के परिवारजनों ने जैन मुनियों की समाधि की स्मृति में अलग-अलग काल में इन्हें बनवाया है।

इन सभी स्तम्भों पर जैन तीर्थंकरों की मूर्तियां बनी हुई हैं और इन सबमें सबसे बड़ा स्तम्भ आठ फीट तक का है। यह दुर्लभ खोज की है राजस्थान के प्रसिद्ध आर्कियोलॉजिस्ट कुक्की ओमप्रकाश ने जो पहले भी नई-नई खोजें कर और हजारों पुरातात्विक अवशेष ढूंढ़कर दिल्ली, राजस्थान और बूंदी के म्युजियम को अनमोल सौगातें दे चुके हैं और पुरातात्विक क्षेत्र में अपनी अलग पहचान रखते हैं।

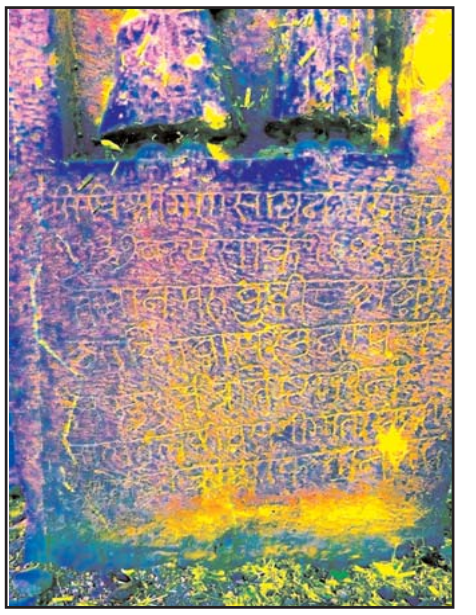

विश्व की सबसे लम्बी रॉक पेंटिंग ढूंढ़ने का श्रेय भी इन्हीं को जाता है लेकिन इस खोज के बाद अब जरूरी है कि बूंदी और नैनवा का स्थानीय समाज अपनी धरोहर को बचाने के लिए आगे आए। इससे पहले भी झालरापाटन में एक पहाड़ी पर 2014 में इसी तरह के स्तम्भ का पता चला था जिन्हें वहां के स्थानीय जैन समाज ने पहाड़ी के उस क्षेत्र को अपने अधिकार में ले लिया था। विदित हो कि राजस्थान के हाड़ौती, वागड़, ढूंढ़ाण क्षेत्रों में 1000 वर्ष प्राचीन इस तरह के स्तम्भ विशेष रूप से मिलते हैं।

पुरुषोत्तम पल्लव लिखित 'मां शबरी' का विमोचन

उदयपुर (ह. सं.)। पुरुषोत्तम पल्लव लिखित 'मां शबरी' के विमोचन में डॉ. देव कोठारी ने कहा कि 'मां शबरी' जनजातीय परिवेश, कला एवं संस्कृति का जीवंत प्रतिरूप है। डॉ. सुरेश सालवी ने कहा कि 'मां शबरी' पर मेवाड़ी में पहली बार लेखन हुआ है। इसमें अनछुए पहलुओं पर शोधपरक दृष्टि डालकर लेखन किया है। पल्लव ने पुस्तक की विषयवस्तु पर जानकारी दी।

रवीन्द्र श्रीमाली एवं राधिका लड्ढ़ा ने भी विचार रखे। इस अवसर पर जयप्रकाश पंड्या ज्योतिपुंज, दीपक दीक्षित, डॉ. प्रियंका भट्ट, किरणबाला किरण, कपिल पालीवाल, प्रमोद सनाढ्य, त्रिलोकीमोहन पुरोहित, राधेश्याम सरावगी, माधव, तरुण दाधीच, डॉ. सिम्मी सिंह, प्रकाश तातेड़, डॉ. निर्मल गर्ग, कीर्ति दीक्षित, हेमंत जोशी आदि मौजूद रहे।

रेकिट और प्लान इंडिया में साझेदारी

उदयपुर (ह. सं.)। उपभोक्ता स्वास्थ्य और स्वच्छता में वैश्विक अग्रणी रेकिट ने 'नई माताओं और पांच वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए स्वयं की देखभाल' पहल शुरू करने के लिए प्लान इंडिया के साथ साझेदारी की है। यह पहल गुजरात के भावनगर और गिर सोमनाथ, महाराष्ट्र के धुले और वाशिम और राजस्थान के राजसमंद में मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य में सुधार पर केंद्रित है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की स्वयं की देखभाल की परिभाषा के आधार पर, यह परियोजना स्वास्थ्य को बढ़ावा देने, बीमारी को रोकने और कल्याण के प्रबंधन में व्यक्तियों, परिवारों और समुदायों की भूमिका को पहचानती है। इसका उद्देश्य नई माताओं के समग्र कल्याण को बढ़ाना है और बचपन के विकास में स्वयं -देखभाल को एकीकृत करना है, यह पुष्टि करते हुए कि स्वास्थ्य सभी का एक मौलिक अधिकार है।

यह पहल ग्रामीण समुदायों में युवा माताओं को पारंपरिक नुक्कड़ नाटकों, विभिन्न प्रकार की शैक्षिक गतिविधियों और घर-घर जाकर महत्वपूर्ण स्वास्थ्य जानकारी और सेवाओं को उनके दरवाजे तक पहुंचाने वाले अभिनव आउटरीच कार्यक्रमों के माध्यम से जोड़ रहीं है। रेकिट में विदेश मामलों और भागीदारी के निदेशक रवि भटनागर ने कहा कि यह गाना सभी नई माताओं के लिए एक आदरांजलि है।

'नई माताओं और 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए स्वयं -देखभाल' के माध्यम से, हम विभिन्न आदिवासी समुदायों के साथ जुड़ रहे हैं और न केवल जागरूकता फैला रहे हैं, बल्कि माताओं को प्रभावी स्वयं -देखभाल के लिए आवश्यक उपकरणों से भी लैस कर रहे हैं, जिससे सभी के लिए परिवर्तनकारी स्वास्थ्य सुधार होते हुए देखे जा सकते हैं। नई माताओं को एजेंसी के साथ सशक्त बनाकर और हाइपर-स्थानीय प्रथाओं को बढ़ावा देकर, हम समुदायों के भीतर सशक्तिकरण और लचीलेपन की संस्कृति विकसित कर रहे हैं।

गुजराती लोक संगीत में विश्व-प्रसिद्ध नाम गीता रबारी ने कार्यक्रम के संदेश को बढ़ाने के लिए अपनी आवाज दी है। उन्होंने कहा कि एक गायक के रूप में, मैं दिलों को छूने, दिमाग को प्रेरित करने और इस तरह से शिक्षित करने की संगीत की शक्ति में विश्वास करती हूं जो हमारे समुदायों में बहुत गहराई से निहित है। यह गीत सभी माताओं को मेरी आदरांजलि है - जो गुमनाम नायकों की तरह जीवन और प्रेम को बढ़ावा देते हैं।

वर्षीतप-तपस्वियों का अभिनंदन

सतीश-प्रमिला पोरवाल तथा बसंतकुमार-उमा मारवाड़ी के वर्षीतप पारणा समारोह में तपस्वियों का अभिनंदन करते डॉ. तुक्तक-रंजना भानावत।

देवनारायण की गाथा-गायकी और सर्वेक्षण

- भगवतीलाल जोशी 'बेकसूर'-

देवनारायण बगड़ावतों में सर्वोपरि यश अर्जित करने वाले व्यक्तित्व हैं। इनकी गाथा पवाड़े, नाम, भारत इत्यादि संज्ञाओं में लोक प्रचलित है। एक गाथा संकलन एवं सम्पादन 'देवनारायण रो भारत' नाम से भारतीय लोककला मण्डल, उदयपुर द्वारा प्रस्तुत लोककला (अंक 18 जुलाई, 1969) के अन्तर्गत देखने को मिलता है। और भी इस गाथा की अनेकानेक संकलित और अप्रकाशित पाण्डुलिपियां मुझे देखने को मिली हैं। डॉ. महेन्द्र भानावत (उदयपुर), श्री काना रावत (टाटगढ़-भीम), श्री जगमोहन (भीलवाड़ा) श्री लोढ़ा - यतीन्द्र साहित्य सदन (भीलवाड़ा), डॉ, ब्रजमोहन जावलिया (उदयपुर) तथा लेखक के पास ऐसी पाण्डुलिपियां देखी जा सकती हैं।

इसके अतिरिक्त श्री गोकुल भोपा (दौलतगढ़), श्री रूपा गूजर (बादरपुरा-आसींद), श्री गंगाराम गूजर (हयाण-आसींद), श्री लक्ष्मीनारायण भोपा (लदाना-जयपुर) को यह गाथा कंठस्थ है। श्री लक्ष्मीनारायण भोपा के अतिरिक्त अन्य भोपों से भी मैंने यह गाथा आद्योपांत सुनी है। भारतीय लोककला मण्डल, उदयपुर और राजस्थान संगीत नाटक अकादमी, जोधपुर ने इस गाथा का रेकार्डिंग किया है। इतना होने पर भी इस गाथा सम्बन्धी अभी बहुत सारा कार्य शेष रह गया है। जहां-जहां भी राजस्थान, उत्तरप्रदेश और मालवा में गूजर जाति है या उनके देवस्थल हैं वहां-वहां जाकर इसका अध्ययन किया जाना चाहिए।

ऐसी ही वृहत् गाथा शेष बगड़ावतों की भी है। यह 'बगड़ावत भारत' के नाम से अधिक प्रचलित है। साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर की शोधपत्रिका (लोकसाहित्य विशेषांक वर्ष 19, सन् 1968) के अन्तर्गत डॉ. कृष्णकुमार शर्मा द्वारा लिपिबद्ध और डॉ. देवीलाल पालीवाल द्वारा सम्पादित यह गाथा 'बगड़ावत लोकगाथा' नाम से देखने को मिलती है।

इसी गाथा का एक संकलन मास्टर अमराराम गोदारा (बोड़वा-नागौर) ने 'बगड़ावत महाभारत लोकगीत' नाम से प्रकाशित किया है। जोधपुर क्षेत्र की ओर गाई जाने वाली गाथा को डॉ. पुरुषोत्तम मेनारिया ने 'बगड़ावत भारत' नाम से लिपिबद्ध किया है। इस गाथा का एक अंश रानी लक्ष्मी कुमारी चूण्डावत ने 'मरुभारती' में प्रकाशित किया है।

इसका एक दूसरा रूप शिवसिंह चोयल ने भी मरुभारती में प्रकाशित कराया है। रामस्वरूप शर्मा (पुरानी पड़ासोली-भीलवाड़ा) और श्री देवीलाल कुम्हार (हथाए-आसींद) ने भी अलग-अलग रूप से 'बगड़ावत भारत' नाम से इस गाथा को संकलित किया है।

श्री काना रावत (टाटगढ़), डॉ. महेन्द्र भानावत और डॉ. ब्रजमोहन जावलिया ने भी 'बगड़ावत भारत' नाम से इसके संकलन अपने पास सुरक्षित रख छोड़े हैं। 'बगड़ावन लोकगाथा' नाम से डॉ. कृष्णकुमार शर्मा ने साहित्य संस्थान, उदयपुर के तत्वावधान में इसी संकलन का पुन: सम्पादन किया है। जो गाथा 1668 में शोधपत्रिका (अंक 1, वर्ष 16) में प्रकाशित हुई थी उसी को पुस्तक रूप में सन् 1970 में इसी संस्था द्वारा 'बगड़ावत लोकगाथा- राजस्थान की वीरकथात्मक लोकगाथा' नाम से प्रकाशित किया है। स्वयं लेखक ने भी इस गाथा को आसींद-बदनोर क्षेत्र से लोक प्रचलित 'बगड़ावत महाभारत' नाम से संकलित किया है। आगे जाकर रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत ने बगड़ावत नाम से एक बड़ा ग्रंथ प्रकाशित किया जिसका पाठ-सम्पादन डॉ. महेन्द्र भानावत ने किया।

इन दो गाथाओं के अतिरिक्त भी बगड़ावत और देवनारायण सम्बन्धी अन्य साहित्यिक विधाएं प्रचलित हैं जो अब तक अज्ञात रही हैं। यह गाथा गद्य शैली में भी कही जाती है। ठाकुर साहब उम्मेदसिंहजी (दौलतगढ़) के पास ऐसी एक प्रति बादामी कागज पर हस्तलिखित सुरक्षित है जो मेरे पास है। इसको ठा. सा. श्री दौलतसिंहजी ने किसी से लिखवाई बताते हैं।

इस गद्य शैली के अतिरिक्त चर्चरी, प्रभाती, आरती, संपाड़ा का जाप, गीत इत्यादि रूप भी हमें इस क्षेत्र में देखने को मिले हैं। गीत प्राय: महिलाओं के द्वारा देवस्थल पर भादवी छठ या मई सातम के दिन या रातिजगे के अवसर पर गाये जाते हैं। हम इनमें से प्रत्येक विधा का आंशिक रूप उदाहरणार्थ यहां प्रस्तुत कर रहे हैं।

चर्चरी :

जेत जमो आसमान
पवन पाणी नोलखतारा
पांच पाण्डु, छठा नाराण की जोत
बारा मेख माला, जमी अरण्ड
ओखन्द का देव
पारस पीपल सांवला पीवना
संख समन्दर नीपजै
गेरी करै आवाज
चाईल, चतरधारी बरान्या, सांखलवाले ठाठ
मेघनाथ बजावै की
ऊदल ने बड़दाव नारद भाट

यह चर्चरी आकार में लम्बी कविता जैसी और शैली में खण्डकाव्य जैसी प्रतीत होती है। श्री धन्ना भगत (गुलखेड़ा-आसीन्द) से ठा. सा. श्री पद्मसिंहजी (जगपुरा) के सहयोग से मैंने इसको लिपिबद्ध किया है।

प्रभाती :

देवनारायण सम्बन्धी प्रभातियां भी कई मिलती हैं। ये प्राय: प्रभात में भक्तों द्वारा देव की आराधना हेतु गाई जाती है। एक प्रभाती का प्रारम्भिक अंश यों है-

देव दल बल का दास
दुश्मन का बेरी
राम व्हेर रावण ने मारिया
लंकागढ़ गेरी
भोजा तणकै बाय आया
लजा बांकी राखी
मालासेरी कांकर फूट कंबल नीकल्या
हाथा कंबल फूल

आरती :

यह प्राय: सामूहिक रूप से गाई जाती है। देवनारायण की निम्नलिखित आरती भी गेय है-

ठाकुर माता भली गरवादेव के जीनै जसोदा तणो है ओतार
ठाकुर पिता भला है निर्जनदेव के, जीनै है राजा दसरथ तणो ओतार

इस आरती में भाई, बहिन, घोड़ी, साला, हाथी, नापा (गुबाल), गाये, भाट, पत्नी इत्यादि को अवतारी घोषित किया गया है और अन्त में गायक इन विशेष पंक्तियों का वादन करता है-

'भुणां का भाई की आरती, मेंदू की आरती, दीपू का बोरा की आरती, छोछू का धाया की आरती, मदना का भाई की आरती, लंगड़ियाँ हनुमान की आरती, ऊजला अन्नदेव की आरती, पातला जलदेव की आरती, माता धरती की आरती, माता कूंता की आरती, एक ऊगता भाण की आरती, को कासल का भाण की आरती, गुरुदाता की आरती, मात-पिता की आरती, सब कालीगोली आरती मालम करज्यो.....।

संपाड़ा का जाप :

इसका वादन स्नान के समय किया जाता है। इसका प्रारम्भिक रूप इस प्रकार है -

धूणी पाणी सदा की बाणी
गुरु मंगाई, चेला आणी।

इसके मध्य में 'साढ़ माता संता ऊभी करै गरजना' कहा जाता है। साथ ही बीच-बीच में 'संपाड़ा करै किसन मुरारी' पंक्ति को दोहराया जाता है।

गीत :

देवनारायण और बगड़ावत सम्बन्धी सभी गीत प्राय: महिलाओं द्वारा गाये जाते हैं किन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कोई हंसोड़ व्यक्ति जो औरतों में घुलमिल जाता है वह भी उनके साथ-साथ उनके झुण्ड में बैठ कर गाने लगता है। श्रीमती चन्द्रकान्ता जोशी के प्रयास से लगभग 101 गीत लिपिबद्ध किये गये हैं। उसमें से एक गीत उदाहरणार्थ यहां प्रस्तुत किया जा रहा है-

देवजी दड़ावट का देवरां थानै देखिया
देवजी नृत्यां पधारो परथीनाथ, पाट पधारो देवनारायण,
पाट पधारोजी बेटा भोज का।
देवजी रमिया-रमिया कुलड़ा रै मांय, बागां रे मांय,
पाट पधारोजी बेटा भोज का।
देवजी बगड़ावतां रा देवरा थानै देखिया,
देवजी नृत्यां पधारो धरतीनाथ, पाट पधारो देवनारायण,
पाट पधारोजी बेटा भोज का।
देवजी रमिया-रमिया फुलड़ा रै मांय, बागां रै मांय,
पाट पधारोजी बेटा भोज का।

देवरों की नाम वृद्धि के साथ-साथ इस गीत का कलेवर बढ़ता जाता है।

बगड़ावत-कथा के आधार पर ऐतिहासिक और भौगोलिक अनुसंधान की आवश्यकता है। इस दृष्टि से अब तक कार्य न्यून ही रहा है। बगड़ावत कथा पूर्णत: ऐतिहासिक है। इसमें वणित सभी स्थान मुझे देखने को मिले हैं। इसके सभी पात्र भी ऐतिहासिक हैं।

लोकरस की प्राप्ति के विविध उत्स

- वसन्त निरगुणे -

लोकरस का अर्थ लोक के आनन्द से है। यह लोक रसपूर्ण है। हमारी चेतना में लोकरस सबसे अधिक प्रवाहित होता है। इसका सम्बन्ध हमारे चेत्र मस्तिष्क और हमारी ओजस्वी आत्मा से है। एक हमारे विचार का केन्द्र है और दूसरा भाव का केन्द्र है। बिना भाव के कोई व्यक्ति नहीं रह सकता और बिना विचार के मनुष्य का व्यक्तित्व ही नहीं बन सकता।

भाव और विचार दोनों मनुष्य की शिराओं से सम्बन्ध रखते हैं। शिराएँ रक्त से संचालित होती हैं। जब कोई अच्छे भाव और विचार शिराओं के रक्त में मिल जाते हैं, तब रक्त में एक प्रकार की ऊर्जा संचारित होने लगती है, जो पूरे शरीर को उद्वेलित कर देती है। यह दशा आनन्द और विषाद के क्षणों में हर मनुष्य के साथ होती है।

हमारे लोकमनीषियों ने इस 'लोकरसी' सृष्टि के परम तत्व को ईश्वर में खोजने की कोशिश की। ऋषि मुनियों ने तप में ढूँढ़ने की चेष्टा की तो आचार्यों ने उसे वेद-उपनिषद, पुराण में खोजने का प्रयत्न किया। वाल्मीकि और व्यास ने उसे रामायण-महाभारत और श्रीमद् भागवत में खोजने की राह खोजी।

यह लोक बहुत विस्तृत है। जितना विस्तारित यह लोक है, उतना ही विस्तारित उसका 'लोकरस' भी है। प्रकृति, धरती और नियति से लगाकर मनुष्य द्वारा सृजित संस्कृति तक में 'लोकरस' की उपस्थिति होती है। यह 'लोकरस' सृष्टि का सत्व है, जो चराचर की नसों में संचरित है। यही 'लोकरस' सृष्टि को बांधे रखता है। बिखरने नहीं देता।

यदि यह 'लोकरस' न होता तो जीवन कब का नीरस हो उठता। हमारे लोकमनीषियों ने इस 'लोकरसी' सृष्टि के परम तत्व को ईश्वर में खोजने की कोशिश की। ऋषि मुनियों ने तप में ढूँढ़ने की चेष्टा की तो आचार्यों ने उसे वेद-उपनिषद, पुराण में खोजने का प्रयत्न किया। वाल्मीकि और व्यास ने उसे रामायण-महाभारत और श्रीमद् भागवत में खोजने की राह खोजी। साहित्यकार उसे अपनी-अपनी रचनाओं में बांधने-समझने का यत्न करते हैं।

जरा इस प्रकृति को तो देखिये- कितनी लयबद्ध है यह। यह उसका 'लोकरस' है। प्रकृति अपने इस अखूट 'लोकरस' को हजारों-हजार वर्षों से धरती के प्राणी मात्र के लिये मुक्त हस्त से लुटा रही है। सूरज न जाने कब से प्रकाश की ऊर्जा बाँट रहा है। चन्द्रमा कब से शीतल चांदनी का अमृत बरसा रहा है। हवा जिसे प्राणवायु की संज्ञा दी गई है, एक पल के लिये भी बहना बंद नहीं होती। आपके फेफड़े तक वह सहज रूप से पहुँच रही है। नित नई, नित्य शुद्ध, निरन्तर जीवन बनकर।

यहाँ मुझे एक चीनी दार्शनिक लाउत्से की बात याद आ रही है। उन्होंने कहा है- इस आकाश के नीचे नया क्या है और धरती पर पुराना क्या है? यह आकाश लाखों-करोड़ों वर्षों से सब कुछ देख रहा है, उसके लिये नया कुछ भी नहीं है और पृथ्वी पर पुराना एक पल में बदल जाता है। पलक झपकते ही सब कुछ नया हो जाता है। दरअसल लाउत्से उसी 'नित नूतन लोकरस' की बात कह रहे हैं जिसे भारतीय लोकमनीषा ने सृष्टि के प्रारम्भ में ही खोज लिया था। प्रकृति की दो खोजी आंखें चांद और सूरज न जाने कब से उसे देख रही हैं। सब कुछ अपने स्मृति पटल पर अंकित कर रही हैं।

जब से यह नियति बनी तब से वर्षा हो रही है। धरती पर बीज अंकुरित हो रहे हैं। एक किसान आदिम युग से 'बीज' में 'लोकरस' ढूँढ़ रहा है। उसके इस लोकरस की खोज में सृष्टि के पलने-बढ़ने का मर्म समाहित है। बीज से पेड़-पौधे बनते हैं। पेड़-पौधों से फूल और फल मिलते हैं। फल से फिर बीज मिल जाता है। मनुष्य जीवन का यही चक्र है।

जीवन की यह लोकलय कभी टूटती नहीं है। इस लय को प्राप्त करने में और इसे सदैव निरन्तर बनाये रखने में लोक की मनीषा की सृजनशील मूल ऊर्जा ही काम करती आई है। यह लय आनन्द और सौंदर्य की श्रीवृद्धि करती आई है। लोक ने इसे काव्य, कथा, गीत-गाथा, प्रतीक और मिथक में पाने की पहुँच बनाई है। इन सब लोक विधाओं का मूल मकसद उस 'लोकरस' को पाना है, जो जीवन के परम सत्य को छूता हो, पकड़ता हो। यह 'परम सत्य' ही असली 'लोकरस' है जिसकी तलाश मनुष्य अपने जन्म के समय से करता आया है। जिस किसी ने भी सृष्टि के इस परम सत्य लोकरस के सागर में एकबार अवगाहन कर लिया, समझो उसने अमृत पा लिया, वह जीवन से मुक्त हो गया।

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 904, आर्ची आर्केड, राम-लक्ष्मण वाटिका के पास, न्यू भूपालपुरा उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत।
फोन : 0294-2429291, मोबाइल-9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।